ख़िताब

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

लिबास

के शरई उसूल

ख़िताब

जस्टिस मौलाना मुफ़्ती
मुहम्मद तक़ी साहिब उस्मानी

अनुवादक
मु० इमरान क़ासमी एम०ए० (अलीग)

प्रकाशक
फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०
422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6
फ़ोन आफ़िस 3289786,3289159 आवास 3262486

☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆☆

नाम किताब	लिबास के शरई उसूल
ख़िताब	मौलाना मु० तक़ी उस्मानी
अनुवादक	मुहम्मद इमरान क़ासमी
संयोजक	मुहम्मद नासिर ख़ान
तायदाद	2100
प्रकाशन वर्ष	दिसम्बर 2001
कम्पोज़िंग	इमरान कम्प्यूटर्स मुज़फ़्फ़र नगर (0131-442408)

\>>>>>>>>>>>

प्रकाशक

फ़रीद बुक डिपो प्रा० लि०

422, मटिया महल, ऊर्दू मार्किट, जामा मस्जिद देहली 6

फ़ोन आफ़िस 3289786,3289159 आवास 3262486

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

लिबास के शरई उसूल

اَلْحَمْدُ لِلّٰہِ نَحْمَدُہٗ وَنَسْتَعِیْنُہٗ وَنَسْتَغْفِرُہٗ وَنُؤْمِنُ بِہٖ وَنَتَوَکَّلُ عَلَیْہِ وَنَعُوْذُ بِاللّٰہِ مِنْ شُرُوْرِ اَنْفُسِنَا وَمِنْ سَیِّئَاتِ اَعْمَالِنَا مَنْ یَّھْدِہِ اللّٰہُ فَلَا مُضِلَّ لَہٗ وَمَنْ یُّضْلِلْہُ فَلَا ھَادِیَ لَہٗ وَنَشْھَدُ اَنْ لَّا اِلٰہَ اِلَّا اللّٰہُ وَحْدَہٗ لَا شَرِیْکَ لَہٗ وَنَشْھَدُ اَنَّ سَیِّدَنَا وَسَنَدَنَا وَمَوْلَانَا مُحَمَّدًا عَبْدُہٗ وَرَسُوْلُہٗ صَلَّی اللّٰہُ تَعَالٰی عَلَیْہِ وَعَلٰی اٰلِہٖ وَ اَصْحَابِہٖ وَبَارَکَ وَسَلَّمَ تَسْلِیْمًا کَثِیْرًا کَثِیْرًا۔ اَمَّا بَعْدُ:

اَعُوْذُ بِاللّٰہِ مِنَ الشَّیْطٰنِ الرَّجِیْمِ، بِسْمِ اللّٰہِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِیْمِ۔

"یٰبَنِیْٓ اٰدَمَ قَدْ اَنْزَلْنَا عَلَیْکُمْ لِبَاسًا یُّوَارِیْ سَوْاٰتِکُمْ وَرِیْشًا، وَلِبَاسُ التَّقْوٰی ذٰلِکَ خَیْرٌ" (الاعراف: ٢٦)

اٰمنت باللّٰہ صدق اللّٰہ مولانا العظیم، وصدق رسولہ النبی الکریم، ونحن علی ذالک من الشاھدین والشاکرین، والحمد للّٰہ رب العالمین۔

तमहीद (आरंभिका)

जैसा कि पहले भी अर्ज़ कर चुका हूं कि इस्लाम की तालीमात ज़िन्दगी के हर शोबे को घेरे हुए हैं, इसलिये उनका ताल्लुक़ हमारी मुआशरत और रहन सहन के हर हिस्से से है, ज़िन्दगी का कोई गोशा इस्लाम की तालीमात से ख़ाली नहीं। "लिबास" भी ज़िन्दगी के गोशों में से अहम गोशा है, इसलिये कुरआन व सुन्नत ने इसके बारे में भी तफ़्सीली हिदायतें दी हैं।

मौजूदा दौर को प्रोपैगन्डा

आज कल हमारे दौर में यह प्रोपैगन्डे बड़ी कस्रत से किया गया है कि लिबास तो ऐसी चीज़ है जिसका हर क़ौम और हर वतन के हालात से ताल्लुक़ होता है, इसलिये आदमी अगर अपनी मर्ज़ी और माहौल के मुताबिक़ कोई लिबास इख़्तियार कर ले तो इसके बारे में शरीअ़त को बीच में लाना और शरीअ़त के अहकाम सुनाना तंग नज़री की बता है, और यह जुम्ला तो लोगों से बहुत ज़्यादा सुनने में आता है कि इन मौलवियों ने अपनी तरफ़ से क़ैदें और शर्तें लगा दी हैं, वर्ना दीन में तो बड़ी आसानी है, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तो दीन में इतनी पाबन्दियां नहीं लगाई हैं, मगर इन मुल्लाओं ने अपनी तरफ़ से घड़ कर ये पाबन्दियां लागू कर रखी हैं, और यह इन मुल्लाओं की तंग नज़री की दलील है, और इस तंग नज़री के नतीजे में इन्हों ने ख़ुद भी बहुत सी बातों को छोड़ रखा है और दूसरों से भी छुड़ा रखा है।

हर लिबास अपना असर रखता है

ख़ूब समझ लीजिए: लिबास का मामला इतना सादा और इतना आसान नहीं है कि आदमी जो चाहे लिबास पहनता रहे और उस लिबास की वजह से उसके दीन पर और उसके अख़्लाक़ पर और उसकी ज़िन्दगी पर, उसके तर्ज़े अ़मल पर कोई असर न पड़े, यह एक मानी हुई हक़ीक़त है जिसको

शरीअ़त ने तो हमेशा बयान फ़रमाया, और अब नफ़्सियात और साइन्स के माहिरीन भी इस हक़ीक़त को तस्लीम करने लगे हैं कि इन्सान के लिबास का उसकी ज़िन्दगी पर, उसके अख़्लाक़ पर, उसके किर्दार पर बड़ा असर पड़ता है, लिबास महज़ एक कपड़ा नहीं है, जो इन्सान ने उठा कर पहन लिया है, बल्कि यह लिबास इन्सान के सोचने के अन्दाज़ पर, उसकी सोच पर, उसकी ज़ेहनियत पर असर डालता है। इसलिये लिबास को मामूली नहीं समझना चाहिए।

हज़रत उमर रज़ि० पर जुब्बे का असर

हज़रत फ़ारूक़े आज़म रज़ियल्लाहु अ़न्हु के बारे में रिवायत है कि एक बार मस्जिदे नबवी में ख़ुतबा देने के लिए तशरीफ़ लाए, उस वक़्त वह एक बहुत शानदार जुब्बा पहने हुए थे। जब ख़ुतबे से फ़ारिग़ हो कर घर तशरीफ़ लाए तो जाकर उस जुब्बे को उतार दिया, और फ़रमाया कि मैं आइन्दा इस जुब्बे को नहीं पहनूंगा, इसलिये कि इस जुब्बे को पहनने से मेरे दिल में बड़ाई और तकब्बुर का एहसास पैदा हो गया, इसलिये मैं आइन्दा इसको नहीं पहनूंगा। हालांकि वह जुब्बा अपने आप में ऐसी चीज़ नहीं थी, जो हराम होती, लेकिन अल्लाह तआ़ला जिन हज़रात की तबीयतों को आईने की तरह साफ़ शफ़्फ़ाफ़ बनाते हैं, उनको ज़रा ज़रा सी बात भी बुरी लगती हैं, इसकी मिसाल यों समझिये कि जैसे एक कपड़ा दाग़दार है, और कपड़े पर हर जगह धब्बे ही धब्बे लगे हुए हैं, उसके बाद उस

कपड़े पर एक दाग़ और आकर लग जाए तो उस कपड़े पर कोई असर ज़ाहिर न होगा। हमारा भी यही हाल है कि हमारा सीना दाग़ों और धब्बों से भरा हुआ है, इसलिये अगर ख़िलाफ़े शरीअ़त कोई बात हो जाती है तो उसकी ज़ुल्मत और उसकी अंधेरी और उसके वबाल का एहसास नहीं होता। लेकिन जिन हज़रात के सीनों को अल्लाह तआ़ला आईने की तरह शफ़्फ़ाफ़ बनाते हैं, उनकी मिसाल ऐसी है, जैसे सफ़ेद, साफ़ शफ़्फ़ाफ़ कपड़ा हो, उस पर अगर ज़रा सा भी दाग़ लग जायेगा तो वह दाग़ बहुत नुमायां नज़र आयेगा, इसी तरह अल्लाह वालों के दिल साफ़ शफ़्फ़ाफ़ होते हैं उन पर ज़रा सी भी छींट पड़ जाए तो उनको नागवार होती है। तो हज़रत उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु के वाक़िए से मालूम हुआ कि लिबास का असर इन्सान के अख़्लाक़ व किर्दार पर और उसकी ज़िन्दगी पर पड़ता है। इसलिये लिबास को मामूली समझ कर नज़र अन्दाज़ नहीं करना चाहिए, और लिबास के बारे में शरीअ़त के जो उसूल हैं वे समझ लेने चाहिऐं और उनकी पैरवी करनी भी ज़रूरी है।

आज कल का एक और प्रोपैगन्डा

आज कल यह जुम्ला भी बहुत कस्रत से सुनने में आता है कि साहिब, इस ज़ाहिरी लिबास में क्या रखा है, दिल साफ़ होना चाहिए, और हमारा दिल साफ़ है, हमारी नियत अच्छी है, अल्लाह तआ़ला के साथ हमारा ताल्लुक़ क़ायम है। सारे काम तो हम ठीक कर रहे हैं, अब अगर ज़रा सा लिबास बदल दिया

तो इसमें क्या हरज है? इसलिये कि दीन ज़ाहिर का नाम नहीं, बातिन का नाम है। दीन जिस्म का नाम नहीं, रूह का नाम है। शरीअ़त की रूह देखनी चाहिए, दीन की रूह को समझना चाहिए। आज कल इस क़िस्म के जुम्ले बहुत कस्रत से फैले हुए हैं और फैलाए जा रहे हैं और फ़ैशन बन गए हैं।

ज़ाहिर और बातिन दोनों मतलूब हैं

ख़ूब याद रखिए, दीन के अहकाम रूह पर भी हैं, जिस्म पर भी हैं, बातिन पर भी हैं और ज़ाहिर पर भी हैं। कुरआने करीम का इर्शाद है।

"وَذَرُوا ظَاهِرَ الْإِثْمِ وَبَاطِنَهُ" (سورة الانعام:١٢٠)

यानी ज़ाहिर के गुनाह भी छोड़ो और बातिन के गुनाह भी छोड़ो, सिर्फ़ यह नहीं कहा कि बातिन के गुनाह छोड़ो। ख़ूब याद रखिए: जब ज़ाहिर ख़राब है तो फिर यह शैतान का धोखा है कि बातिन ठीक है, इसलिये कि ज़ाहिर उसी वक़्त ख़राब होता है, जब अन्दर से बातिन ख़राब होता है, अगर बातिन ख़राब न हो तो ज़ाहिर भी ख़राब नहीं होगा।

एक ख़ूबसूरत मिसाल

हमारे एक बुज़ुर्ग एक मिसाल दिया करते थे कि जब कोई फल अन्दर से सड़ जाता है तो उसके सड़ने के आसार छिलके पर दाग़ की शक्ल में नज़र आने लगते हैं, और अगर अन्दर से वह फल सड़ा हुआ नहीं है तो छिलके पर कभी ख़राबी नज़र नहीं आयेगी, छिलके पर उसी वक़्त ख़राबी ज़ाहिर होती है जब

अन्दर से ख़राब हो। इसी तरह जिस शख़्स का ज़ाहिर ख़राब है तो यह इस बात की निशानी है कि बातिन में भी कुछ न कुछ ख़राबी ज़रूर है। वर्ना ज़ाहिर ख़राब होता ही नहीं। इसलिये यह कहना कि हमारा ज़ाहिर अगर ख़राब है तो क्या हुआ? बातिन ठीक है। याद रखिए इस सूरत में बातिन कभी ठीक हो ही नहीं सकता।

दुनियावी काम में ज़ाहिर भी मतलूब है

दुनिया के सारे कामों में तो ज़ाहिर भी मतलूब है, और बातिन भी मतलूब है, एक बेचारा दीन ही ऐसा रह गया है जिसके बारे में यह कह दिया जाता है कि हमें इसका बातिन चाहिए, ज़ाहिर नहीं चाहिए, जैसे दुनिया के अन्दर जब आप मकान बनाते हैं तो मकान का बातिन तो यह है कि चार दीवारी खड़ी करके ऊपर से छत डाल दी तो बातिन हासिल हो गया, अब उस पर पलास्तर की क्या ज़रूरत है? और रंग व रोग़न की क्या ज़रूरत है? इसलिये कि मकान की रूह तो हासिल हो गई है, वह मकान रहने के क़ाबिल हो गया। मगर मकान के अन्दर तो यह फ़िक्र है कि सिर्फ़ चार दीवारी और छत काफ़ी नहीं, बल्कि पलास्तर भी हो, रंग व रोग़न भी हो, उसमें ख़ूबसूरती का सारा सामान मौजूद हो। यहां कभी सिर्फ़ बातिन ठीक कर लेने का फ़ल्सफ़ा नहीं चलता। या जैसे गाड़ी है, एक उसका बातिन है और एक ज़ाहिर है, गाड़ी का बातिन यह है कि एक ढांचा लेकर उसमें इन्जन लगा लो, तो अब

बातिन हासिल है। इसलिये कि इन्जन लगा हुआ है। वह सवारी करने के क़ाबिल है, इसलिये अब न बाडी की ज़रूरत है, न रंग व रोग़न की ज़रूरत है, वहां तो किसी शख़्स ने आज तक यह नहीं कहा कि मुझे गाड़ी का बातिन हासिल है, अब ज़ाहिर की ज़रूरत नहीं, बल्कि वहां तो ज़ाहिर भी मतलूब है और बातिन भी मतलूब है। एक बेचारा दीन ही ऐसा मिस्कीन रह गया कि इसमें सिर्फ़ बातिन मतलूब है ज़ाहिर मतलूब नहीं।

यह शैतान का धोखा है

याद रखिए, यह शैतान का धोखा और फ़रेब है। इसलिये ज़ाहिर भी दुरुस्त करना ज़रूरी है और बातिन भी दुरुस्त करना ज़रूरी है, चाहे लिबास हो, या खाना हो, या रहन सहन और ज़िन्दगी गुज़ारने के आदाब हों, अगरचे इन सब का ताल्लुक़ ज़ाहिर से है, लेकिन इन सब का गहरा असर बातिन पर पड़ता है। इसलिये लिबास को मामूली समझ कर नज़र अन्दाज़ नहीं करना चाहिए। जो लोग ऐसी बातें करते हैं, उनको दीन की सही समझ हासिल नहीं। अगर यह बात न होती तो हुज़ूर नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लिबास के बारे में कोई हिदायत न फ़रमाते, कोई तालीम न देते, लेकिन आपने लिबास के बारे में हिदायतें दीं, आपकी तालीमात उसी जगह पर आती हैं, जहां लोगों के बहक जाने और ग़लती में पड़ जाने का ख़तरा होता है। इसलिये इन

उसूलों को और तालीमात को तवज्जोह के साथ सुनने की ज़रूरत है।

शरीअ़त ने कोई लिबास मख़्सूस नहीं किया

शरीअ़त ने लिबास के बारे में बड़ी मोतदिल तालीमात अ़ता फ़रमाई हैं। चुनांचे शरीअ़त ने कोई ख़ास लिबास मुक़र्रर करके और उसकी हैयत बता कर यह नहीं कहा कि हर आदमी के लिए ऐसा लिबास पहनना ज़रूरी है, इसलिये जो शख़्स इस हैयत से हट कर लिबास पहनेगा वह मुसलमानी के ख़िलाफ़ है। ऐसा इसलिये नहीं किया कि इस्लाम दीने फ़ित्रत है, और हालात के लिहाज़ से, मुख़्तलिफ़ मुल्कों के लिहाज़ से, वहां के मौसमों के लिहाज़ से, वहां की ज़रूरियात के लिहाज़ से लिबास मुख़्तलिफ़ हो सकता है। कहीं मोटा, कहीं किसी ढंग का, कहीं किसी हैयत का लिबास इख़्तियार किया जा सकता है, लेकिन इस्लाम ने लिबास के बारे में कुछ बुनियादी उसूल अ़ता फ़रमा दिए, उन उसूलों की हर हालत में रियायत और लिहाज़ रखना ज़रूरी है। उनको समझ लेना चाहिए।

लिबास के चार बुनियादी उसूल

जो आयत मैंने आपके सामने तिलावत की है, उसमें अल्लाह तआ़ला ने लिबास के बुनियादी उसूल बता दिए हैं, फ़रमाया कि:

"يَابَنِىٓ اٰدَمَ قَدْ اَنْزَلْنَا عَلَيْكُمْ لِبَاسًا يُّوَارِىْ سَوْاٰتِكُمْ وَرِيْشًا، وَلِبَاسُ التَّقْوٰى ذٰلِكَ خَيْرٌ" (سورة الاعراف:٢٦)

ऐ बनी आदम, हमने तुम्हारे लिए ऐसा लिबास उतारा जो तुम्हारी पोशीदा और शर्म की चीज़ों को छुपाता है, और जो तुम्हारे लिए ज़ीनत का सबब बनता है, और तक़्वे का लिबास तुम्हारे लिए सब से बेहतर है।

ये तीन जुम्ले इर्शाद फ़रमाए, और इन तीन जुम्लों में अल्लाह तआला ने उलूम की कायनात भर दी है।

लिबास का पहला बुनियादी मक़्सद

इस आयत में लिबास का पहला मक़्सद यह बयान फ़रमाया कि वह तुम्हारी पोशीदा और शर्म की चीज़ों को छुपा सके। "सौआत" के मायने वह चीज़ जिसके ज़िक्र करने से या जिसके ज़ाहिर होने से इन्सान शर्म महसूस करे, मुराद है "सत्रे औरत" तो गोया कि लिबास का सब से बुनियादी मक़्सद "सत्रे औरत" है। अल्लाह तआला ने मर्द और औरत के जिस्म के कुछ हिस्सों को "औरत" (छुपाने की चीज़) क़रार दिया, यानी वह छुपाने की चीज़ है। वह "सत्रे औरत" मर्दों में और है, औरतों में और है, मर्दों में सत्र का हिस्सा जिसको छुपाना हर हाल में ज़रूरी है। वह नाफ़ से लेकर घुटनों तक का हिस्सा है। इस हिस्से को खोलना बिला ज़रूरत जायज़ नहीं। इलाज वग़ैरह की मजबूरी में तो जायज़ है, लेकिन आम हालात में उसको छुपाना ज़रूरी है। औरत का सारा जिस्म, सिवाए चेहरे और गट्टों तक हाथ के सब का सब "औरत" और "सत्र" है। जिसका छुपाना ज़रूरी है। और खोलना जायज़ नहीं।

इसलिये लिबास का बुनियादी मक़सद यह है कि वह शरीअ़त के मुक़र्रर किए हुए सत्र के हिस्सों को छुपा ले। जो लिबास इस मक़सद को पूरा न करे, शरीअ़त की निगाह में वह लिबास ही नहीं, वह लिबास कहलाने के लायक़ ही हीं, क्योंकि वह लिबास अपना बुनियादी मक़सद पूरा नहीं कर रहा है, जिसके लिए वह बनाया गया है।

लिबास के तीन ऐब

लिबास के बुनियादी मक़सद को पूरा न करने की तीन सूरतें होती हैं। एक सूरत तो यह है कि वह लिबास इतना छोटा है कि लिबास पहनने के बावजूद सत्र का कुछ हिस्सा खुला रह गया, उस लिबास के बारे में यह कहा जायेगा कि उस लिबास से उसका बुनियादी मक़सद हासिल न हुआ, और छुपने वाला हिस्सा खुल गया। दूसरी सूरत यह है कि उस लिबास से सत्र को छुपा तो लिया, लेकिन वह लिबास इतना बारीक है कि उस से अन्दर का बदन झलकता है। तीसरी सूरत यह है कि लिबास इतना चुस्त है कि लिबास के बावजूद जिस्म की बनावट और जिस्म का उभार नज़र आ रहा है, यह भी सत्र के ख़िलाफ़ है। इसलिये मर्द के लिए नाफ़ से लेकर घुटनों तक का हिस्सा ऐसे कपड़े से छुपाना ज़रूरी है जो इतना मोटा हो कि अन्दर से जिस्म न झलके, और वह इतना ढीला ढाला हो कि अन्दर के बदन के हिस्सों को नुमायां न करे, और इतना मुकम्मल हो कि जिस्म का कोई हिस्सा खुला

न रह जाए, और यही तीन चीज़ें औरत के लिबास में भी ज़रूरी हैं।

आज कल का नंगा पहनावा

मौजूदा दौर के फ़ैशन ने लिबास के असल मक़सद ही को मज्रूह कर दिया है। इसलिये कि आज कल मर्दों और औरतों में ऐसे लिबास राइज़ हो गये हैं जिनमें इसकी कोई परवाह नहीं कि जिस्म का कौन सा हिस्सा खुल रहा है और कौन सा हिस्सा ढका हुआ है। शरीअ़त की निगाह में वह लिबास लिबास ही नहीं। जो औ़रतें बहुत बारीक और बहुत चुस्त लिबास पहनती हैं, जिसकी वजह से कपड़ा पहनने के बावजूद जिस्म की बनावट दूसरों के सामने ज़ाहिर होती है ऐसी औ़रतों के बारे में हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया किः

"كاسيات عاريات" (مسلم شریف)

वे औ़रतें नंगी लिबास पहनने वालियां होंगी। यानी लिबास पहनने के बावजूद नंगी होंगी, इसलिये कि उस कपड़े से लिबास का वह बुनियादी मक़्सद हासिल न हुआ जिसके लिए अल्लाह तआ़ला ने लिबास को उतारा था। आज कल औ़रतों में यह वबा इस कस्रत से फैल चुकी है जिसकी कोई हद नहीं, शर्म व हया सब ताक़ पर रख दी गई है, और ऐसा लिबास राइज हो गया जो जिस्म को छुपाने के बजाए और नुमायां करता है, ख़ुदा के लिए हम इस बात को महसूस करें और

अपने अन्दर फ़िक्र पैदा करें और अपने घरों में ऐसे लिबास पर पाबन्दी लगायें जो नबी-ए-करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के इन इर्शादात के ख़िलाफ़ हो। अल्लाह तआ़ला अपनी रहमत से हमारे दिलों में यह एहसास और फ़िक्र पैदा फ़रमाए, आमीन।

औ़रतें इन आज़ा (जिस्म के हिस्सों) को छुपायें

हमारे हज़रत डाक्टर अ़ब्दुल हई साहिब रह्मतुल्लाहि अ़लैहि अल्लाह तआ़ला उनके दरजों को बुलन्द फ़रमाये, आमीन। शायद ही आपका कोई जुमा ऐसा जाता हो जिसमें इस पहलू की तरफ़ मुतवज्जह न फ़रमाते हों, फ़रमाया करते थे कि यह जो फ़ितने आज कल आ़म रिवाज पा गये हैं, इनको किसी तरह ख़त्म करो, औ़रतें इस हालत में आ़म मज्मे के अन्दर जा रही हैं कि सर खुला हुआ है, बाज़ू खुले हुए हैं, सीना खुला हुआ है, पेट खुला हुआ है। हालांकि "सत्र" का हुक्म यह है कि मर्द के लिए मर्द के सामने सत्र खोलना भी जायज़ नहीं और औ़रत के लिए औ़रत के सामने सत्र खोलना भी जायज़ नहीं। जैसे अगर किसी औ़रत ने ऐसा लिबास पहन लिया जिसमें सीना खुला हुआ है, पेट खुला हुआ है, बाज़ू खुले हुए हैं, तो उस औ़रत को इस हालत में दूसरी औ़रतों के सामने आना भी जायज़ नहीं। कहां यह कि इस हालत में मर्दों के सामने आए, इसलिये कि यह अंग उसके सत्र का हिस्सा हैं।

गुनाहों के बुरे नतीजे

आज कल की शादी की तक़रीबात में जाकर देखिए, वहां क्या हाल हो रहा है, औरतें बे–हयाई के साथ ऐसे लिबास पहन कर मर्दों के सामने आ जाती हैं, यह अल्लाह तआला के अज़ाब को दावत देने वाली बात नहीं है तो और क्या है? डंके की चोट, सीना तान कर, ढिटाई के साथ जब हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के इर्शादात की ऐसी खुल्लम खुल्ला खिलाफ़ वर्ज़ी होगी तो इसके बारे में हमारे हज़रत डा० साहिब रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाया करते थे कि हक़ीक़त में इन फ़ितनों ने हमारे ऊपर यह अज़ाब मुसल्लत कर रखा है। यह बद अमनी और बेचैनी जो आप देख रहे हैं कि किसी इन्सान की जान व माल महफ़ूज़ नहीं है, हकीकत में हमारी इन ही बद आमालियों का नतीजा है, कुरआने करीम का इर्शाद है:

"وَمَآ اَصَابَكُمْ مِّنْ مُّصِيْبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ اَيْدِيْكُمْ وَ يَعْفُوْ عَنْ كَثِيْرٍ"
(سورة الشورى: ٣٠)

यानी जो कुछ तुम्हें बुराई पहुंचती है वह सब तुम्हारे हाथों के करतूत की वजह से पहुंचती है। और बहुत से गुनाह तो अल्लाह तआला माफ़ ही फ़रमा देते हैं और उनकी पकड़ नहीं फ़रमाते हैं। ख़ुदा के लिए अपने घरों से इस फ़ितने को दूर करें।

क़ियामत के क़रीबी ज़माने में औ़रतों की हालत

एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस ज़माने का एक ऐसा नक़्शा खींचा है कि अगर आजका ज़माना किसी ने न देखा होता तो वह शख़्स हैरान हो जाता कि इस हदीस का मतलब क्या है? और आपने इस तरह नक़्शा खींचा जिस तरह कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मौजूदा दौर की औ़रतों को देख कर यह इर्शाद फ़रमाया हो। इसलिये कि उस ज़माने में इसका तसव्वुर भी नहीं था। चुनांचे फ़रमाया कि क़ियामत के क़रीब औ़रतें लिबास पहनने के बावजूद नंगी होंगी और उनके सरों के बाल ऐसे होंगे जैसे बख़्ती ऊंटों के कोहान होते हैं। अब ज़ाहिर है कि जिस ज़माने में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह बात इर्शाद फ़रमाई थी। उस ज़माने में इस क़िस्म के बालों का कोई रिवाज नहीं था, यही वजह है कि बाज़ हदीस के शारिहीन ने इस पर कलाम किया है कि इसका क्या मतलब है? बख़्ती ऊंटों के कोहान की तरह बाल किस तरह हो सकते हैं? लेकिन आजके नये फ़ैशन ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पैशीन गोई को पूरा कर दिया और ऐसा लगता है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने आजकी औ़रतों को देख कर यह बात इर्शाद फ़रमाई हो।

(मुस्लिम शरीफ़)

आगे इर्शाद फ़रमाया कि:

"مميلات مائلات"

यानी वे औरतें अपने लिबास से, अपने अन्दाज़ से, अपने ज़ेब व ज़ीनत और अपने बनाव सिंगार से दूसरों को अपनी तरफ़ माइल करने वाली होंगी। और तख़्त पर सवार होकर आयेंगी और मज्सिद के दरवाज़ों पर उतरेंगी। अब हदीस के शारिहीन इस हदीस की तश्रीह में हैरान थे कि इसका क्या मतलब है? लेकिन आजके हालात ने इस हदीस को वाज़ेह कर दिया कि किस तरह कारों के अन्दर बैठ कर औरतें आती हैं। ख़ुदा के लिए इस बात को ज़ेहन में बिठा लीजिए कि ये जो फ़ितने और मुसीबतें और बद अम्नी और बेचैनी है, यह हक़ीक़त में इस बात का नतीजा है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के अहकाम की ख़ुल्लम खुल्ला बग़ावत हो रही है।

खुल्लम खुल्ला गुनाह करने वाले

एक बात और समझ लीजिए कि गुनाहों की भी दो क़िस्में हैं। एक गुनाह वह है जो इन्सान चोरी छुपे तन्हाई में कर रहा है। खुलेआम दूसरों के सामने नहीं कर रहा है, और कभी कभी उसको गुनाहों पर शर्मिन्दगी और नदामत भी हो जाती है और तौबा की भी तौफ़ीक़ हो जाती है। लेकिन दूसरा शख़्स सब के सामने और खुल्लाह खुल्ला दूसरों के सामने गुनाह कर रहा है और उस पर फ़ख़्र भी कर रहा है कि मैंने यह गुनाह किया, यह बड़ी ख़तरनाक बात है, एक हदीस में हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इर्शाद फ़रमाया कि:

"کل امتی معافی الا المجاھرین" (بخاری شریف)

यानी मेरी उम्मत में जितने गुनाह करने वाले हैं, सब की मग़फ़िरत की उम्मीद है, इन्शा अल्लाह सब की माफ़ी हो जायेगी, या तो तौबा की तौफ़ीक़ हो जायेगी, या अल्लाह तआ़ला वैसे ही माफ़ फ़रमा देंगे। लेकिन वे लोग जो डंके की चोट पर खुल्लम खुल्ला ऐलानिया गुनाह करने वाले हों, और उस गुनाह पर कभी शर्मिन्दा न होते हों, बल्कि उस गुनाह पर फ़ख़्र करते हों और बल्कि उस गुनाह को सवाब समझ कर करते हों कि जो कुछ हम कर रहे हैं यह दुरुस्त है, और अगर उनको समझाया जाए तो उस पर बहस करने और मुनाज़रा करने को तैयार हो जाएं। और कहते हैं कि इसमें क्या हर्ज है? क्या हम ज़माने से कट जायें? क्या हम दक़ियानूस होकर बैठ जायें? और सारी दुनिया के ताने हम अपने सर ले लें? क्या समाज से कट कर बैठ जायें?

समाज को छोड़ दो

अरे यह तो देखो कि अगर समाज से कट कर अल्लाह के हो जाओगे, यह कौन सा महंगा सौदा है? याद रखो कि क़ब्र में जाने के बाद तुम्हारे आमाल के सिवा कोई तुम्हारा साथी नहीं होगा। उस वक़्त तुम अपने समाज को मदद के लिए पुकारना कि तुम्हारी वजह से हम यह काम कर रहे थे, अब आकर हमारी मदद करो, क्या उस वक़्त तुम्हारे समाज दे अफ़राद में

से कोई आकर तुम्हारी मदद करेगा? और तुम्हें अल्लाह तआ़ला के अ़ज़ाब से छुड़ा सकेगा? उस वक़्त के बारे में क़ुरआने करीम का इर्शाद है कि:

"مَا لَكُمْ مِّنْ دُوْنِ اللّٰهِ مِنْ وَّلِيٍّ وَّلَا نَصِيْرٍ" (البقرة:١٠٧)

यानी उस वक़्त अल्लाह तआ़ला के सिवा कोई तुम्हारा वली और मददगार नहीं होगा जो तुम्हें अ़ज़ाब से छुड़ा सके।

नसीहत भरा वाक़िआ

क़ुरआने करीम ने सूरः साफ़्फ़ात में एक शख़्स का वाक़िआ लिखा है कि अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल से उस शख़्स को जब जन्नत में पहुंचा देंगे, और जन्नत की सारी नेमतें अ़ता फ़रमा देंगे, उस वक़्त उसको अपने एक साथी और दोस्त का ख़्याल आयेगा कि मालूम नहीं उसका क्या हाल है? इसलिये कि वह दुनिया के अन्दर मुझे ग़लत कामों पर उकसाया करता था, और मुझ से बहसें किया करता था कि आज कल के हालात ऐसे हैं, माहौल ऐसा है, समाज के तक़ाज़े ये हैं, वक़्त के तक़ाज़े ये हैं वग़ैरह। तो ऐसी बातें करके मुझे बहकाया करता था। अब ज़रा उसको देखूं तो वह किस हाल में है? चुनांचे वह जब उसको देखने के लिए जहन्नम के अन्दर झांकेगा। क़ुरआने करीम फ़रमाता है कि:

"فَاطَّلَعَ فَرَاٰهُ فِىْ سَوَآءِ الْجَحِيْمِ، قَالَ تَاللّٰهِ اِنْ كِدْتَّ لَتُرْدِيْنِ، وَلَوْ لَا نِعْمَةُ رَبِّىْ لَكُنْتُ مِنَ الْمُحْضَرِيْنَ" (الصافات:٥٥تا٥٧)

जब उसको देखने के लिए जहन्नम के अन्दर झांकेगा तो

उस साथी को जहन्नम के बीचों बीच देखेगा, और फिर उसको मुख़ातिब हो कर उस से कहेगा कि मैं क़सम खाकर कहता हूं कि तूने मुझे हलाक ही कर दिया था। यानी अगर मैं तेरे कहने में आ जाता, तेरी बात मान लेता और तेरी इत्तिबा करता तो आज मेरा भी यही हश्र होना था जो हश्र तेरा हो रहा है। और अगर मेरे साथ मेरे रब का फ़ज़्ल और उसकी रहमत शामिले हाल न होती तो मुझे भी इसी तरह धर लिया गया होता, जिस तरह आज तुझे धर लिया गया है।

हम बैक-वर्ड ही सही

बहर हाल, इस समाज के तक़ाज़े यहां पर तो बड़े ख़ुशनुमा लगते हैं, लेकिन अगर इस बात पर ईमान है कि एक दिन मरना है और अल्लाह तआ़ला के सामने जवाब देना है, अल्लाह तआ़ला के सामने हाज़िर होना है और जन्नत और जहन्नम भी कोई चीज़ है, तो फिर ख़ुदा के लिए इस समाज की बातों को छोड़ो, इसके डर और ख़ौफ़ को छोड़ो, अल्लाह और अल्लाह के रसूल सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के अहकाम की तरफ़ आओ। और यह समाज तुम्हें जो ताने देता है, उन तानों को ख़ुशी से बर्दाश्त करो, अगर समाज यह कहता है कि तुम रज्अ़त पसन्द हो। तुम दक़ियानूस हो, तुम बैक–वर्ड (Bake Ward) हो तुम ज़माने के साथ चलना नहीं जानते। तो एक बार इस समाज को ख़म ठोक कर और कमर कस कर यह जवाब दे दो कि हम ऐसे ही हैं, तुम अगर हमारे साथ ताल्लुक़

रखना चाहते हो रखो, नहीं रखना चाहते, मत रखो। जब तक एक बार यह नहीं कहोगे याद रखो, यह समाज तुम्हें जहन्नम की तरफ़ ले जाता रहेगा।

ये ताने मुसलमान के लिए मुबारक हैं

हज़राते अंबिया अलैहिमुस्सलाम को भी ये ताने दिए गये। सहाबा— ए—किराम को भी ये ताने दिए गये, और जो शख़्स भी दीन पर चलना चाहता है उसको दिए जाते हैं। लेकिन जब तक इन तानों को अपने लिए फ़ख़्र का सबब नहीं क़रार दोगे, याद रखो, उस वक़्त तक कामयाबी हासिल नहीं होगी। एक रिवायत में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का इर्शाद है कि:

"اکثروا ذکراللہ حتی یقولوا "مجنون" (مسند احمد)

अल्लाह की याद और ज़िक्र इस हद तक करो कि लोग तुम्हें पागल कहने लगें।

मतलब यह है कि अगर समाज एक तरफ़ जा रहा है, ज़माना एक तरफ़ जा रहा है, अब तुम उसके बहाव पर बहने के बजाए उसके बहाव का रुख़ मोड़ने की कोशिश करो। चुनांचे आज अगर कोई शख़्स दियानत दारी और अमानत दारी से कोई काम करता है, तो लोग उसके बारे में यही कहते हैं कि यह पागल है, इसका दिमाग़ ख़राब हो गया है। जैसे आज अगर कोई शख़्स यह चाहे कि मैं रिश्वत न लूं, न रिश्वत दूं, सूद न खाऊं और हराम कामों से परहेज़ करूं, और लिबास के

मामले में अल्लाह तआ़ला के बताये हुए अहकाम पर अ़मल करूं, तो उस वक़्त समाज उसको यही कहेगा कि इसका दिमाग़ ख़राब हो गया है, यह पागल है, हालांकि जब समाज तुम्हें यह कहे कि तुम पागल हो, तुम्हारा दिमाग़ ख़राब हो गया है, तो यह हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की तरफ़ से खुश ख़बरी है। और तुम्हारे लिए फ़ख़्र वाला कलिमा है, और यह वह लक़ब है जो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने तुम्हें दिया है। इसलिये जिस दिन तुम्हें दीन की वजह से कोई शख़्स यह कह दे कि यह पागल है, उस दिन ख़ुशी मनाओ, और दो रक्अ़त शुक्राने की नमाज़ अदा करो कि अल्लाह तआ़ला ने आज हमें उस मक़ाम तक पहुंचा दिया जो नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक मोमिन के लिए फ़रमाया था। इसलिये इस से डरने और घबराने की कोई ज़रूरत नहीं। मौलाना ज़फ़र अ़ली ख़ां मरहूम ने ख़ूब कहा कि:

तौहीद तो यह है कि खुदा हश्र में कह दे
यह बन्दा दो आ़लम से ख़फ़ा मेरे लिए है

इसलिये अगर सारी दुनिया के ख़फ़ा होने के नतीजे में अल्लाह तबारक व तआ़ला से तुम्हारा ताल्लुक़ जुड़ जाए तो क्या यह महंगा सौदा है? यह दुनियावी ज़िन्दगी मालूम नहीं कितने दिन की ज़िन्दगी है, ये बातें ये ताने सब ख़त्म होकर रह जायेंगे, और जिस दिन तुम्हारी आंख बन्द होगी और वहां तुम्हारा इस्तिक़बाल (स्वागत) होगा, उस वक़्त तुम देखना कि

इन ताना देने वालों का क्या हश्र होगा, और यह ताने देने वाले जो आज तुम पर हंस रहे हैं, कियामत के दिन ये हंसने वाले रोयेंगे और तुम हंसा करोगे। इसलिये इस समाज वालों से कब तक सुलह करोगे, कब तक इनके सामने हथियार डालते रहोगे, कब तक तुम इनके पीछे चलोगे। इसलिये जब तक एक बार हिम्मत करके इरादा नहीं करोगे, उस वक़्त तक छुटकारा नहीं मिलेगा। और नंगेपन के लिबास का जो रिवाज चल पड़ा है, एक बार पक्का इरादा करके इसको ख़त्म करो। अल्लाह तआला हम सब को इसकी हिम्मत और तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन। बहर हाल, अल्लाह तआला ने लिबास का जो पहला मक़सद बयान फ़रमाया, वह है "सत्रे औरत" जो लिबास छुपाने वाला नहीं, वह हकीकत में लिबास ही नहीं, वह नंगापन है।

लिबास का दूसरा मक़सद

लिबास का दूसरा मक़सद अल्लाह तआला ने यह बयान फ़रमाया कि "रीशन्" यानी हमने उस लिबास को तुम्हारे लिए ज़ीनत की चीज़ और ख़ूबसूरती की चीज़ बनाई, एक इन्सान की ख़ूबसूरती लिबास में है, इसलिये लिबास ऐसा होना चाहिए कि जिसे देख कर इन्सान को ख़ुशी हो, बद शक्ल और बे ढंगा न हो, जिसको देख कर दूसरों को नफ़रत और कराहत हो, बल्कि ऐसा होना चाहिए जिसको देख कर ज़ीनत का फ़ायदा हासिल हो सके।

अपना दिल खुश करने के लिए क़ीमती लिबास पहनना

कभी कभी दिल में यह शक व गुमान रहता है कि कैसा लिबास पहनें? अगर बहुत क़ीमती लिबास पहन लिया तो यह ख़्याल रहता है कि कहीं फ़ुज़ूल ख़र्ची में दाख़िल न हो जाए? अगर मामूली लिबास पहनें तो किस दर्जे का पहनें? अल्लाह तआ़ला हज़रत थानवी रह० के दरजों को बुलन्द फ़रमाए, आमीन। अल्लाह तआ़ला ने इस दौर के अन्दर उन से ऐसा अ़जीब काम लिया कि आपने कोई चीज़ छुपी नहीं छोड़ी, हर हर चीज़ को दो और दो चार करके बिल्कुल वाज़ेह करके इस दुनिया से तशरीफ़ ले गए। चुनांचे आपने लिबास के बारे में फ़रमाया कि लिबास ऐसा होना चाहिए जो छुपाने वाला हो और छुपाने वाला होने के साथ साथ उस से थोड़ा सा आसाइश का मक़्सद भी हासिल हो, यानी उस लिबास के ज़रिये जिस्म को राहत भी हासिल हो, आराम भी हासिल हो, ऐसा लिबास पहनने में कोई हर्ज नहीं। जैसे पतला लिबास पहन लिया, इस ख़्याल से कि जिस्म को आराम मिलेगा, इसमें कोई हर्ज नहीं, शर्अ़न जायज़ है। शरीअ़त ने इस पर कोई पाबन्दी लागू नहीं की। इसी तरह अपने दिल को ख़ुश करने के लिए ख़ुशनुमा और ज़ीनत का लिबास पहने तो यह भी जायज़ है। जैसे एक कपड़ा दस रुपये गज़ है और दूसरा कपड़ा पन्द्रह रुपये गज़ मिल रहा है, अब अगर एक शख़्स पन्द्रह रुपये गज़ वाला इसलिये

ख़रीदे कि उसके ज़रिये मेरे जिस्म को आराम मिलेगा, या इस वजह से कि यह कपड़ा मुझे ज़्यादा अच्छा लगता है। इसको पहनने से मेरा दिल ख़ुश होगा और अल्लाह तआ़ला ने मुझे इतनी वुस्अ़त दी है कि मैं दस रुपये के बजाए पन्द्रह रुपये गज़ वाला कपड़ा पहन सकता हूं, तो यह न फ़ुज़ूल ख़र्ची में दाख़िल है, और गुनाह भी नहीं है, बल्कि शर्अ़न यह भी जायज़ है। इसलिये कि अल्लाह तआ़ला ने तुम्हें वुस्अ़त भी दी है, और तुम अपना दिल ख़ुश करने के लिए ऐसा कपड़ा पहन रहे हो, इसलिये जायज़ है।

मालदार को अच्छे कपड़े पहनना चाहिए

बल्कि जिस शख़्स की आमदनी अच्छी हो, उसके लिए ख़राब क़िस्म का कपड़ा और बहुत घटिया क़िस्म का लिबास पहनना कोई पसन्दीदा बात नहीं, चुनांचे हदीस शरीफ़ में है कि एक साहिब हुज़ुरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की ख़िदमत में हाज़िर हुए, आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने देखा कि वह साहिब बहुत बद शक्ल क़िस्म का पुराना लिबास पहने हुए हैं, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उन साहिब से पूछा:

"الك مال؟ قال نعم، قال: من اى المال؟ قال قد اتانى اللّٰه من الابل والغنم والخيل والرقيق، قال، فاذا اتاك اللّٰه مالا فليرا ثرنعمة اللّٰه عليك وكرامته" (ابو داؤد شريف)

हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने उस से पुछा:

"तुम्हारे पास माल है? उसने कहा कि हां, आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने पूछा कि तेरे पास किस क़िस्म का माल है? उसने जवाब दिया कि या रसूलल्लाह, अल्लाह तआला ने मुझे हर क़िस्म का माल अता फ़रमाया है, यानी ऊंट, बकरियां, घोड़े और ग़ुलमा सब हैं। आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जब अल्लाह तआला ने तुम्हें माल दिया है तो उसके इनामात का कुछ असर तुम्हारे लिबास से भी ज़ाहिर होना चाहिए, ऐसा न हो कि अल्लाह तआला ने तो सब कुछ दे रखा है, लेकिन फ़क़ीर और मांगने वाले की तरह फटे पुराने कपड़े पहने हुए हैं। यह तो एक तरह से अल्लाह तआला की नेमत की नाशुक्री है। इसलिये अल्लाह तआला की नेमत का असर ज़ाहिर होने का मतलब यह है कि अपने आराम की ख़ातिर और अपनी राहत की ख़ातिर, अपने को संवारने की ख़ातिर कोई शख़्स अच्छा और क़ीमती लिबास पहन ले तो इसमें भी कोई गुनाह नहीं, जायज़ है।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का क़ीमती लिबास पहनना

मैं तो यह कहता हूं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम के बारे में यह बात जो मशहूर हो गई है कि "काली कमली वाले" इस बात को हमारे शायरों ने बहुत मशहूर कर दिया। यह बात सही है, कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की मुबारक ज़िन्दगी का ज़्यादा हिस्सा सादगी की

हालत में बसर हुआ है, लेकिन आप सल्ल० के बारे में जिस तरह यह मन्कूल है कि आप मोटा कपड़ा इस्तेमाल फ़रमाते थे, और जहां यह मन्कूल है कि आपने मोटी चादरें इस्तेमाल फ़रमायीं, इसी तरह आपके बारे में यह भी मन्कूल है कि एक बार आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने एक ऐसा जुब्बा इस्तेमाल फ़रमाया जिसकी क़ीमत दो हज़ार दीनार थी, वजह इसकी यह है कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हर अ़मल शरीअ़त का हिस्सा बनना था, इसलिये हम जैसे कमज़ोरों के लिए यह भी बयान फ़रमाया कि अगर तुम अपनी जिस्मानी राहत और आराम के लिए कोई क़ीमती लिबास पहनना चाहते हो तो यह भी जायज़ है।

नुमाइश और दिखावा जायज़ नहीं

लेकिन अगर लिबास पहनने से न तो आराम मक़सद है, और न ख़ुद को संवारना मक़सूद है, बल्कि नुमाइश और दिखावा मक़सूद है, ताकि लोग देखें कि हमने इतना शानदार कपड़ा पहना हुआ है, और इतना आ़ला दर्जे का लिबास पहना हुआ है, और यह दिखाना मक़सूद है कि हम बड़े दौलत वाले बड़े पैसे वाले हैं, और दूसरों पर बड़ाई जताना और दूसरों पर रोब जमाना मक़सूद है, ये सब बातें नुमाइश में दाख़िल हैं, और हराम हैं, इसलिये कि नुमाइश की ख़ातिर जो भी लिबास पहना जाए वह हराम है।

यहां शैख़ की ज़रूरत

इन दोनों बातों में बहुत बारीक फ़र्क़ है, कि अपना दिल ख़ुश करना मक़्सूद है या दूसरों पर अपनी बड़ाई जताना मक़्सूद है, यह कौन फ़ैसला करेगा कि यह लिबास अपना दिल ख़ुश करने के लिए पहना या दूसरों पर बड़ाई जताने के लिए पहना? यह फ़ैसला करना हर एक के बस का काम नहीं और इस मक़्सद के लिए किसी इस्लाह करने वाले और रहनुमा की ज़रूरत पड़ती है, वह इन दोनों के दरमियान फ़र्क़ करके बता देता है कि इस वक़्त जो कपड़े तुम पहन रहे हो और यह कह रहे हो कि अपना दिल ख़ुश करने के लिए पहन रहा हूं, यह शैतान का धोखा है, हक़ीक़त में इन कपड़ों के पहनने का मक़्सद दूसरों पर बड़ाई ज़ाहिर करना है, और कभी कभी इसके उलट भी हो जाता है। बहर हाल, किसी इस्लाह करने वाले की ज़रूरत है और यह पीरी मुरीदी हक़ीक़त में इसी काम के लिए होती है कि इस क़िस्म के कामों में उस से रहनुमाई हासिल की जाए। कि इस वक़्त मेरे साथ यह सूरते हाल है, बताइये कि इस वक़्त ऐसे कपड़े पहनूं या न पहनूं? वह इस्लाह करने वाला बताता है कि इस वक़्त ऐसे कपड़े पहनो, और इस वक़्त मत पहनो। दिखावे और आराम में यह बारीक फ़र्क़ है। दुनिया के जितने काम हैं, चाहे वह लिबास हो, या खाना हो, या जूते हों, या मकान हो, उन सब में यह असल काम कर रही है जो हज़रत थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि ने

बयान फ़रमा दी है। यह बड़ा सुनेहरा उसूल है।

फ़ुज़ूल ख़र्ची और घमण्ड से बचे

इसी लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का बड़ा उसूली इर्शाद है कि:

"كل ماشئت والبس ماشئت ما اخطئتك اثنتان: سرف ومخيلة"

(بخاری شریف)

यानी जो चाहो खाओ, जो चाहो पहनो, लेकिन दो चीज़ों से परहेज़ करो, एक फ़ुज़ूल ख़र्ची और दूसरे तकब्बुर से, मतलब यह है कि जिस तरह का कपड़ा चाहो पहनो, तुम्हारे लिए यह जायज़ है, लेकिन फ़ुज़ूल ख़र्ची न हो, और फ़ुज़ूल ख़र्ची उसी वक़्त होती है जब आदमी नुमाइश के लिए कपड़ा पहनता है। और दूसरे यह कि जिस कपड़े को पहन कर तकब्बुर पैदा हो, उस से बचो। लेकिन कौन से कपड़े से फ़ुज़ूल ख़र्ची हो गयी और कौन से कपड़े से तकब्बुर पैदा हो गया, इसके लिये किसी तबीब और अ़िलाज करने वाले की ज़रूरत होती है। वह आकर बताता है कि यहां तकब्बुर हो गया, और यहां फ़ुज़ूल ख़र्ची हो गयी। बहर हाल, मैं यह अ़र्ज़ कर रहा था कि लिबास का दूसरा मक़सद है ज़ीनत, लेकिन इस ज़ीनत की हदें हैं, बस उन शरीअ़त की हदों के अन्दर रह कर जितनी ज़ीनत कर सकते हो उसको इख़्तियार कर लो, लेकिन अगर उन हदों से बाहर निकल कर ज़ीनत इख़्तियार करोगे तो यह हराम होगी, और ना जायज़ होगी।

फ़ैशन के पीछे न चलें

आज कल अ़जीब मिज़ाज बन गया है कि अपनी पसन्द या ना पसन्द का कोई मेयार नहीं, बस जो फ़ैशन चल गया वह पसन्द है, और जो चीज़ फ़ैशन से बाहर हो गई वह ना पसन्द है। एक ज़माने में एक चीज़ का फ़ैशन चल रहा था तो अब उसको पसन्द किया जाने लगा और उसकी तारीफ़ की जाने लगी कि यह बहुत अच्छी चीज़ है, और जब उसका फ़ैशन निकल गया तो अब उसी की बुराई शुरू हो गई। जैसे एक ज़माने में लम्बी और नीची क़मीस का फ़ैशन चल गया तो अब जिसको भी देखो वह लम्बी क़मीस पहन रहा है और उसके फ़ज़ाइल बयान कर रहा है, और उसकी तारीफ़ कर रहा है कि यह बहुत अच्छी चीज़ है, और जब ऊंची क़मीस पहनने का फ़ैशन चल पड़ा तो अब ऊंची क़मीस की तारीफ़ हो रही है और उसको पसन्दीदा क़रार दिया जा रहा है। यह फ़ैशन के ताबे होकर ख़ूबसूरती और बद सूरती को मुताय्यन करना सही नहीं, बल्कि अपने आपको जो चीज़ अच्छी लगे, और अपने ख़्याल को जो चीज़ ख़ूबसूरत लगे, उसके पहनने की शरीअ़त की तरफ़ से इजाज़त है।

मन भाता खाओ, मन भाता पहनो

हमारे यहां हिन्दी में एक कहावत मश्हूर थी कि "खाए मन भाता और पहने जग भाता" यानी खाए तो वह चीज़ जो अपने मन को भाए, अपने दिल को अच्छी लगे, अपना दिल उस से

ख़ुश हो, और अपने आपको पसन्द हो। लेकिन लिबास वह पहने जो जग को भाए। जग से मुराद ज़माना, यानी जो ज़माने के लोगों को पसन्द हो। ज़माने के लोग जिसको पसन्द करें, और उनकी आंखों को अच्छा लगे। यह कहावत मश्हूर है लेकिन यह इस्लामी उसूल नहीं, इस्लामी उसूल यह है कि पहने भी मन भाता और खाए भी मन भाता, और "जग भाता" वाली बात न लिबास में दुरुस्त है और न खाने में दुरुस्त है, बल्कि शरीअ़त ने तो यह कहा है कि अपने दिल को ख़ुश करने के लिए शरीअ़त की हदों में रहते हुए जो भी लिबास इस्तेमाल करो, वह जायज़ है। लेकिन फ़ैशन की इत्तिबा में लोगों को दिखाने के लिए और नुमाइश के लिए कोई लिबास इस्तेमाल कर रहे हो तो वह जायज़ नहीं।

औ़रतें और फ़ैशन परस्ती

इस मामले में आज कल ख़ास तौर पर औ़रतों का मिज़ाज सुधार के क़ाबिल है। औ़रतें यह समझती हैं कि लिबास अपने लिए नहीं बल्कि दूसरों के लिए है। इसलिये लिबास पहन कर अपने दिल को ख़ुश करने का मामला बाद का है, असल यह है कि देखने वाले उस लिबास को देख कर उसको फ़ैशन के मुताबिक़ क़रार दें, और उसकी तारीफ़ करें, और हमारा लिबास देख कर लोग यह समझें कि ये बड़े लोग हैं, ये बातें औ़रतों में ज़्यादा पाई जाती हैं और इसका नतीजा यह है कि ये औ़रतें अपने घर में अपने शौहरों के सामने तो मैली कुचैली रहेंगी,

और लिबास पहनने का ख़्याल भी नहीं आएगा, लेकिन जहां कहीं घर से बाहर निकलने की नौबत आ गई या किसी तक़्रीब में शिर्कत की नौबत आ गई तो फिर उसके लिए इस बात का एहतिमाम किया जा रहा है कि वह लिबास फ़ैशन के मुताबिक़ हो, और उसके पहनने के नतीजे में वे लोग हमें दौलत मन्द समझें, इसका नतीजा यह है कि अगर एक लिबास एक तक़्रीब के अन्दर पहन लिया तो अब वह लिबास दूसरी तक़्रीब के अन्दर नहीं पहना जा सकता, अब वह लिबास हराम हो गया। इसलिये कि अगर वही लिबास पहन कर दूसरी तक़्रीब में चले गए तो दूसरी औरतें यह समझेंगी कि इनके पास तो एक ही जोड़ा है। सब जगह वही एक जोड़ा पहन कर आ जाती हैं, जिसकी वजह से हमारी बे इज़्ज़ती हो जायेगी। हक़ीक़त में इन बातों के पीछे नुमाइश का जज़्बा है और यह नुमाइश का जज़्बा मना है, लेकिन नुमाइश के इरादे और एहतिमाम के बग़ैर कोई औरत अपने दिल को ख़ुश करने के लिए आज एक जोड़ा पहन ले और कल को दूसरा जोड़ा पहन ले, और अल्लाह ने अ़ता भी फ़रमाया है, तो इसमें कोई हरज नहीं।

हज़रत इमाम मालिक रह० और नये जोड़े

हमारे बुज़ुर्गों में भी ऐसे लोग गुज़रे हैं जो बहुत अच्छा और उम्दा लिबास पहना करते थे, हज़रत इमाम मालिक रह्मतुल्लाहि अ़लैहि का नाम आपने सुना होगा, जो बड़े दर्जे के इमाम गुज़रे हैं। मदीना तैयबा के रहने वाले, इमामे दारुल

हिज्रत, उनके बारे में एक जगह लिखा हुआ देखा कि वह हर दिन एक नया जोड़ा पहना करते थे, गोया कि उनके लिए साल में तीन सौ साठ जोड़े बनते थे, और जो जोड़ा एक दिन पहना, वह दोबारा बदन पर नहीं आता था। दूसरे दिन दूसरा जोड़ा तीसरे दिन तीसरा जोड़ा। किसी को ख़्याल आया कि हर दिन नया जोड़ा पहनना तो फुज़ूल ख़र्ची है, चुनांचे उसने आपसे कहा कि हज़रत यह रोज़ाना नया जोड़ा पहनना तो फुज़ूल ख़र्ची में दाख़िल है? उन्हों ने जवाब दिया कि मैं क्या करूं, बात असल में यह है कि जब साल शुरू होता है तो मेरा एक दोस्त तीन सौ साठ जोड़े सिलवा कर मेरे घर ले आता है, और यह कहता है कि यह आपका रोज़ का एक जोड़ा है, अब मैंने ख़ुद से तो इस बात का एहतिमाम नहीं किया कि रोज़ाना एक जोड़ा पहनूं, अगर मैं इन जोड़ों को वापस कर दूं तो उसका दिल तोड़ने वाली बात होती है, और अगर न पहनूं तो भी उसका मक़्सद हासिल नहीं होगा, इसलिये कि उसका हदिया देने का मक़्सद यह है कि मैं रोज़ाना नया जोड़ा पहनूं। इसलिये मैं रोज़ाना एक जोड़ा बदलता हूं। और उसको उतारने के बाद किसी मुस्तहिक़ को दे देता हूं, जिसकी वजह से बहुत से अल्लाह के बन्दों का भला हो जाता है। बहर हाल, उनका रोज़ाना नया जोड़ा पहनना अपने दिल को ख़ुश करने के लिए था, दिखावे के लिए नहीं था, और जिसने हदिया दिया था उसका दिल ख़ुश करने की ख़ातिर पहन लिया।

हज़रत थानवी रह० का एक वाक़िआ

एक बड़ा अ़जीब व ग़रीब वाक़िआ याद आ गया, यह वाक़िआ मैं ने अपने वालिद माजिद रह्मतुल्लाहि अ़लैहि से सुना है, बड़ा सबक़ आमोज़ वाक़िआ है, वह यह कि हज़रत मौलाना अशरफ़ अ़ली थानवी साहिब की दो बीवियां थीं, एक बड़ी और एक छोटी, दोनों का हज़रते वाला से बहुत ताल्लुक़ था। लेकिन बड़ी पीरानी साहिबा पुराने वक़्तों की थीं, और हज़रते वाला को ज़्यादा से ज़्यादा आराम पहुंचाने की फ़िक्र में रहती थीं, ईद आने वाली थी, हज़रत पीरानी साहिबा के दिल में ख़्याल आया कि हज़रते वाला के लिए किसी उम्दा और अच्छे कपड़े का अच्कन बनाया जाए, उस ज़माने में एक कपड़ा चला करता था, जिसका नाम था "आंख का नशा" यह बड़ा शोख़ क़िस्म का कपड़ा होता था। अब हज़रते वाला से पूछे बग़ैर कपड़ा ख़रीद कर उसका अच्कन सीना शुरू कर दिया और हज़रते वाला को इस ख़्याल से नहीं बताया कि अच्कन सिलने के बाद जब अचानक मैं उनको पेश करूंगी तो अचानक मिलने से ख़ुशी ज़्यादा होगी, और सारा रमज़ान उसके सीने में मश्ग़ूल रहीं, इसलिये कि उस ज़माने में मशीन का रिवाज तो था नहीं, हाथ से सिलाई होती थी, चुनांचे जब वह सिलकर तैयार हो गया तो ईद की रात को वह अच्कन हज़रते वाला की ख़िदमत में पेश करके कहा कि मैंने आपके लिए यह अच्कन तैयार किया है, मेरा दिल चाह रहा है कि

आप इसको पहन कर ईदगाह जायें, और ईद की नमाज़ पढ़ें। अब कहां हज़रते वाला का मिज़ाज और कहां वह शोख़ अच्कन, वह तो हज़रते वाला के मिज़ाज के बिल्कुल ख़िलाफ़ था, लेकिन हज़रत फ़रमाते हैं कि अगर मैं पहनने से इन्कार करूं तो उनका दिल टूट जायेगा, इसलिये कि उन्हों ने तो पूरा रमज़ान उसके सीने में मेहनत की और मुहब्बत से मेहनत की। इसलिये आपने उनका दिल रखने के लिए फ़रमाया कि तुमने तो यह माशा-अल्लाह बड़ा अच्छा अच्कन बनाया है, और फिर आपने वह अच्कन पहना और ईदगाह में पहुंचे और नमाज़ पढ़ाई, जब नमाज़ से फ़ारिग़ हुए तो एक आदमी आपके पास आया, और कहा कि हज़रत आपने यह जो अच्कन पहन रखा है यह आपको ज़ेब नहीं देता, इसलिये कि यह बहुत शोख़ क़िस्म का अच्कन है। हज़रते वाला ने जवाब में फ़रमाया कि हां भाई तुम बात तो ठीक कह रहे हो, और यह कह कर फिर आपने वह अच्कन उतारा और उसी शख़्स को दे दिया कि यह तुम्हें हदिया है, इसको तुम पहन लो।

दूसरे का दिल ख़ुश करना

उसके बाद हज़रत थानवी रहमतुल्लाहि अ़लैहि ने यह वाक़िआ मेरे वालिद माजिद हज़रत मुफ़्ती मुहम्मद शफ़ी साहिब रहमतुल्लाहि अ़लैहि को सुनाया कि जिस वक़्त मैं वह अच्कन पहन कर ईदगाह की तरफ़ जा रहा था तो कुछ न पूछो कि उस वक़्त मेरा दिल कितना कट रहा था, इसलिये कि सारी

उमर इस क़िस्म का शोख़ लिबास कभी नहीं पहना, लेकिन दिल में उस वक़्त यह नियत थी कि जिस अल्लाह की बन्दी ने मेहनत के साथ इसको सिला है उसका दिल ख़ुश हो जाए। तो उसका दिल ख़ुश करने के लिए अपने ऊपर यह मशक़्क़त बर्दाश्त कर ली और उसके पहनने पर ताने भी सहे, इसलिये कि लोगों ने उसके पहनने पर ताने भी दिए कि कैसा लिबास पहन कर आ गए, लेकिन घर वालों का दिल ख़ुश करने के लिए यह काम किया।

बहर हाल, इन्सान अच्छे से अच्छा लिबास अपना दिल ख़ुश करने के लिए पहने, अपने घर वालों का दिल ख़ुश करने के लिए पहने। और किसी हदिया तोहफ़ा देने वाले का दिल ख़ुश करने के लिए पहने तो इसमें कोई हरज नहीं, लेकिन अच्छा लिबास इस मक़्सद के लिए पहनना कि लोग मुझे बड़ा समझें, मैं फ़ैशन ऐबल नज़र आऊं, मैं दुनिया वालों के सामने बड़ा बन जाऊं, और नुमाइश और दिखावे के लिए पहने तो यह अज़ाब की चीज़ है और हराम है, इस से बचना चाहिए।

लिबास के बारे में तीसरा उसूल

लिबास के बारे में शरीअत ने जो तीसरा उसूल बयान फ़रमाया, वह है "तशब्बोह से बचना" यानी ऐसा लिबास पहनना जिसको पहन कर इन्सान किसी क़ौम का फ़र्द नज़र आए, और इस मक़्सद से वह लिबास पहने, ताकि मैं उन जैसा हो जाऊं, इसको शरीअत में तशब्बोह कहते हैं। दूसरे लफ़्ज़ों में

यों कहा जाए कि किसी ग़ैर मुस्लिम क़ौम की नक़्क़ाली की नियत से कोई लिबास पहनना, इस से नज़र हटा कर कि वह चीज़ हमें पसन्द है या नहीं? वह अच्छी है या बुरी है? लेकिन चूंकि फ़लां क़ौम की नक़्क़ाली करनी है बस उनकी नक़्क़ाली के पेशे नज़र उस लिबास को इख़्तियार किया जा रहा है। इसको "तशब्बोह" कहा जाता है। इस नक़्क़ाली पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने बड़ी सख़्त वईद इर्शाद फ़रमाई है। चुनांचे इर्शाद फ़रमाया कि:

"من تشبہ بقوم فهو منهم" (ابوداؤد شریف)

यानी जो शख़्स किसी क़ौम के साथ तशब्बोह इख़्तियार करे, उसकी नक़्क़ाली करे और उन जैसा बनने की कोशिश करे तो वह उन्हीं में से है। गोया कि वह मुसलमानों में से नहीं है, उसी क़ौम का एक फ़र्द है, इसलिये कि यह शख़्स उन्हीं को पसन्द कर रहा है, उन्हीं से मुहब्बत रखता है, उन्हीं जैसा बनना चाहता है, तो अब तेरा हश्र भी उन्हीं के साथ होगा, अल्लाह तआला महफ़ूज़ फ़रमाए, आमीन।

"तशब्बोह" की हक़ीक़त

तशब्बोह के बारे में यह बात समझ लेनी चाहिए कि यह "तशब्बोह" कब पैदा होती है? और कब इसकी मनाही आती है? पहली बात तो यह है कि किसी ऐसे काम में दूसरी क़ौम की नक़्क़ाली करना जो अपने आप में बुरा काम है, और शरीअत के उसूल के ख़िलाफ़ है। ऐसे काम में नक़्क़ाली तो

हराम है। दूसरे यह कि वह काम अगरचे अपने आप में तो बुरा नहीं है, बल्कि दुरुस्त है, लेकिन यह शख़्स इस ग़र्ज़ से वह काम कर रहा है कि मैं उन जैसा नज़र आऊं, और देखने में उन जैसा लगूं, और एहतिमाम करके उन जैसा बनने की कोशिश कर रहा है। इस सूरत में वह दुरुस्त काम भी हराम और ना जायज़ हो जाता है।

गले में ज़ुन्नार डालना

जैसे हिन्दू अपने गले में ज़ुन्नार (वह धागा हिन्दू गले या बग़ल के दर्मियान पहने रहते हैं, या वह धागा या ज़ंजीर जो ईसाई, आग को पूजने वाले यानी मजूसी और यहूदी अपनी कमर में बांधते हैं, इसी तरह निशानी के तौर पर जैसे आज कल हिन्दू अपने हाथ पर लाल धागा बांधे रहते हैं वह भी इसमें दाख़िल माना जायेगा) डाला करते हैं, अब यह ज़ुन्नार एक तरह का हार ही होता है। अगर कोई मुसलमान वैसे ही इत्तफ़ाक़न डाल ले तो कोई गुनाह का काम नहीं है, ना जायज़ और हराम काम नहीं है, बल्कि पहन सकता है। लेकिन अगर कोई शख़्स इस मक़सद के लिए अपने गले में "ज़ुन्नार" डाल रहा है ताकि मैं उन जैसा लगूं तो यह ना जायज़ और हराम है, और "तशब्बोह" में दाख़िल है।

माथे पर क़श्क़ा (बिंदिया) लगाना

या जैसे हिन्दू औरतें अपने माथे पर सुर्ख़ क़श्क़ा (बिंदिया) लगाती हैं, अब अगर मान लो हिन्दू औरतों में इस तरह का

क़श्क़ा (बिंदिया) लगाने का रिवाज न होता, और मुसलमान औरत ख़ूबसूरती और ज़ीनत के लिए लगाती तो यह काम अपने आप में जायज़ था। कोई ना जायज़ और हराम नहीं था। लेकिन अब एक औरत क़श्क़ा (बिंदिया) इसलिये लगा रही है ताकि मैं उनका फ़ैशन इख़्तियार करूं, और उन जैसी नज़र आऊं, तो इस सूरत में यह क़श्क़ा (बिंदिया) लगाना हराम है, ना जायज़ है। हिन्दुस्तान में मुसलमान औरतें तो उनकी मुशाबहत इख़्तियार करने के लिए यह क़श्क़ा (बिंदिया) लगाती हैं, लेकन अब सुना है कि यहां पाकिस्तान में भी औरतों में क़श्क़ा (बिंदिया) लगाने का रिवाज शुरू हो गया है, हालांकि यहां हिन्दू औरतों के साथ रहन सहन भी नहीं है। इसके बावजूद औरतें अपने माथे पर यह क़श्क़ा (बिंदिया) लगाती हैं तो यह उनके साथ "तशब्बोह" इख़्तियार करना है। जो हराम और ना जायज़ है। इसलिये अगर कोई अ़मल जो अगरचे अपनी ज़ात में जायज़ और दुरुस्त हो, मगर उसके ज़रिये दूसरी क़ौमों के साथ मुशाबहत पैदा करना मक़्सूद हो तो उसको "तशब्बोह" कहते हैं। जिसको हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने ना जायज़ और हराम क़रार दिया है।

दूसरी क़ौम की नक़्क़ाली जायज़ नहीं

इसी ऊपर लिखे गये उसूल की बुनियाद पर यह कहा जायेगा कि जो लिबास किसी भी क़ौम का शिआ़र बन चुके हैं। यानी वह लिबास उस क़ौम की ख़ुसूसी पहचान बन चुका है,

अगर उनकी नक़्क़ाली की ग़र्ज़ से ऐसा लिबास इख़्तियार किया जायेगा तो वह हराम और ना जायज़ होगा और गुनाह होगा। जैसे आज कल मर्दों में कोट पतलून का रिवाज चल पड़ा है। इसमें बाज़ बातें तो अपने आप में ना जायज़ हैं। चाहे उसमें तशब्बोह पाया जाये या न पाया जाए। चुनांचे एक ख़राबी तो यह है कि यह पतलून टख़्ने से नीचे पहनी जाती है, और कोई लिबास भी मर्दों के लिए टख़्नों से नीचे पहनना जायज़ नहीं। दूसरी ख़राबी यह है कि अगर पतलून ऐसी चुस्त हो कि उसकी वजह से आज़ा (जिस्म के अंग) नुमायां हों, तो फिर लिबास का जो बुनियादी मक़्सद था, यानी "सतर" करना, वह हासिल न हुआ, तो फिर वह लिबास शरअी लिहाज़ से बेमानी और बेकार है। इसलिये इन दो ख़राबियों की वजह से अपने आप में पतलून पहनना जायज़ नहीं, लेकिन अगर कोई शख़्स इस बात का एहतिमाम करे कि वह पतलून चुस्त न हो, बल्कि ढीली ढाली हो, और इसका एहतिमाम करे कि वह पतलून टख़्नों से नीचे न हो तो ऐसी पतलून पहनना अपने आप में दुरुस्त है।

पतलून पहनना

लेकिन अगर कोई शख़्स पतलून इस मक़्सद से पहने ताकि मैं अंग्रेज़ नज़र आऊं, और उनकी नक़्क़ाली करूं, और उन जैसा बन जाऊं, तो इस सूरत में पतलून पहनना हराम और ना जायज़ है, और "तशब्बोह" में दाख़िल है। लेकिन

अगर नक़्क़ाली मक़्सूद नहीं है, और इस बात का भी एहतिमाम कर रहा है कि पतलून टख़्नों से ऊंची हो और ढीली हो, तो ऐसी सूरत में उसके पहनने को हराम तो नहीं कहेंगे लेकिन अपनी ज़ात के ऐतबार से उस पतलून का पहनना अच्छा नहीं, और फिर भी कराहत से ख़ाली नहीं। क्यों? इस बात को ज़रा ग़ौर से समझ लें।

तशब्बोह और मुशाबहत में फ़र्क़

वह यह कि दो चीज़ें अलग अलग हैं, एक "तशब्बोह" और एक है "मुशाबहत" दोनों में फ़र्क़ है। "तशब्बोह के मायने तो यह हैं कि आदमी इरादा करके नक़्क़ाली करे, और इरादा करके उन जैसा बनने की कोशिश करे, यह तो बिल्कुल ही ना जायज़ है। दूसरी चीज़ है "मुशाबहत" यानी उस जैसा बनने का इरादा तो नहीं किया था, लेकिन इस अ़मल से उनके साथ मुशाबहत ख़ुद बख़ुद पैदा हो गई। तो यह "मुशाबहत" जो ख़ुद बख़ुद पैदा हो जाए यह हराम नहीं, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने बिला ज़रूरत मुशाबहत पैदा होने से भी बचने की ताकीद फ़रमाई है। फ़रमाया कि इसकी कोशिश करो कि उनसे फ़र्क़ रहे। मुसलमान क़ौम और मुसलमान मिल्लत का एक फ़र्क़ और नुमायां पन होना चाहिए। ऐसा न हो कि देख कर पता न चले कि यह आदमी मुसलमान है या नहीं, सर से पांव तक अपना हुलिया ऐसा बना रखा है कि देख कर यह पता ही नहीं चलता कि यह मुसलमान है कि

नहीं, इसको सलाम करें या न करें, जिन चीज़ों के करने की गुंजाइश और इजाज़त है उनके ज़रिये भी ऐसा हुलिया बनाना जायज़ नहीं।

हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का मुशाबहत से दूर रहने का एहतिमाम

आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने "मुशाबहत" से बचने का इतना एहतिमाम फ़रमाया कि मुहर्रम की दस तारीख़ को आ़शूरा के दिन रोज़ा रखना बड़ी फ़ज़ीलत का काम है, और जब आं हज़रत सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम हिज्रत करके मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाए तो शुरू में आ़शूरा का रोज़ा फ़र्ज़ था, और रमज़ान के रोज़े उस वक़्त तक फ़र्ज़ नहीं हुए थे, और जब रमज़ान के रोज़े फ़र्ज़ हो गए तो आ़शूरा के रोज़े की फ़र्ज़ियत ख़त्म हो गई। अब फ़र्ज़ तो न रहा लेकिन नफ़्ल और मुस्तहब बन गया। लेकिन जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को यह मालूम हुआ कि यहूदी भी आ़शूरा के दिन रोज़ा रखते हैं, अब ज़ाहिर है कि अगर मुसलमान आ़शूरा के दिन रोज़ा रखेंगे तो वे यहूदियों की नक़्क़ाली में तो नहीं रखेंगे, वे तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की इत्तिबा में रखेंगे, लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि अगर आइन्दा साल मैं ज़िन्दा रहा तो आ़शूरा के साथ एक रोज़ा और मिला कर रखूंगा, या नवीं तारीख़ का रोज़ा या ग्यारहवीं तारीख़ का

रोज़ा, ताकि यहूदियों के साथ मुशाबहत पैदा न हो, बल्कि उनसे अलाहिदगी और फ़र्क़ पैदा हो जाए। (मुस्नद अहमद)

अब देखिए कि रोज़े जैसी इबादत में भी आं हज़रत सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने मुशाबहत पैदा होने को पसन्द नहीं फ़रमाया, इसलिये आपने फ़रमाया कि जब आशूरा का रोज़ा रखो तो उसके साथ या तो नवीं तारीख़ का रोज़ा मिला लो, या ग्यारहवीं तारीख़ का रोज़ा मिला लो, ताकि यहूदियों के साथ मुशाबहत भी पैदा न हो। इसलिये "तशब्बोह" तो हराम है, लेकिन "मुशाबहत" पैदा हो जाना भी कराहत से ख़ाली नहीं, हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने इस से भी बचने का हुक्म फ़रमाया है।

मुश्रिकीन की मुख़ालिफ़त करो

एक हदीस शरीफ़ में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि:

"خالفوا المشركين" (بخاری شریف)

यानी मुश्रिकीन के तरीक़ों की मुख़ालिफ़त करो, यानी उन्हों ने जैसे तरीक़े इख़्तियार किए हैं तुम उनसे अलग तरीक़ा बनाओ, चुनांचे एक हदीस में फ़रमाया:

"فرق ما بيننا وبين المشركين العمائم على القلانس"

(ابوداؤدشریف)

यानी हमारे और मुश्रिकीन के दरमियान फ़र्क़ टोपी पर अमामा (पगड़ी) पहनना है, यानी मुश्रिकीन अमामे (पगड़ी) के

नीचे टोपियां नहीं पहनते हैं, तुम उनकी मुख़ालिफ़त करो, और अ़मामे (पगड़ी) के नीचे टोपी पहना करो, हांलाकि बग़ैर टोपी के अ़मामा (पगड़ी) पहनना कोई ना जायज़ और हराम नहीं, लेकिन ज़रा सी मुशाबहत से बचने के लिए हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने यह हुक्म फ़रमा दिया कि टोपी के ऊपर अ़मामा (पगड़ी) पहनो, ताकि उन जैसा होना लाज़िम न आए, इसलिये बिला वजह किसी दूसरी क़ौम की मुशाबहत इख़्तियार करना अच्छा नहीं है। आदमी इस से जितना बचे बेहतर है। इसी लिये हज़राते सहाबा–ए–किराम रज़ियल्लाहु अ़न्हुम इसका बहुत एहतिमाम फ़रमाते थे कि दूसरी क़ौमों की मुशाबहत पैदा न हो।

मुसलमान एक आला व अफ़ज़ल क़ौम है

सोचने की बात है कि जब अल्लाह तआ़ला ने तुमको एक अलग क़ौम बनाया, और अपने गिरोह में शामिल फ़रमा कर तुम्हारा नाम "हिज़्बुल्लाह" रखा, यानी अल्लाह का गिरोह, सारी दुनिया एक तरफ़ और तुम एक तरफ़। क़ुरआने करीम ने बयान फ़रमाया कि बुनियादी तौर पर पूरी दुनिया में दो जमाअ़तें हैं, चुनांचे फ़रमाया कि:

"خَلَقَكُمْ فَمِنْكُمْ كَافِرٌ وَّمِنْكُمْ مُّؤْمِنٌ" (سورة التغابن:٢)

यानी दो जमाअ़तें हैं। एक काफ़िर और एक मोमिन, इसलिये मोमिन को कभी काफ़िर की जमाअ़त के साथ गड–मड न होना चाहिए। इसका फ़र्क़ होना चाहिए उसके

लिबास में, उसकी पोशाक में उसकी शक्ल व सूरत में, उसके उठने बैठने में, उसके तरीके अदा में। हर चीज़ में इस्लामी रंग नुमायां होना चाहिए, अब अगर मुसलमान दूसरों का तरीका इख़्तियार कर ले तो उसके नतीजे में वह इम्तियाज़ (यानी जो उसकी एक अलग शान है) मिट जायेगा।

अब आज देख लो कि यह जो तरीका चल पड़ा है कि सब का लिबास एक जैसा है, अगर तुम किसी मजमे में जाओगे तो यह पता लगाना मुश्किल होगा कि कौन मुसलमान है कौन मुसलमान नहीं, न लिबास से, न पोशाक से, न किसी और अन्दाज़ से, यह पता नहीं लगा सकते, अब इसको सलाम करें या ने करें? और इस से किस किस्म की बातें करें। इसलिये इन ख़राबियों का दरवाज़ा बन्द करने के लिए हुज़ूरे अक्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तशब्बोह से भी बचो इसलिये कि वह तो बिल्कुल हराम है, और "मुशाबहत" से भी बचो। और यह मुशाबहत भी कराहत यानी ना पसन्दीदगी से ख़ाली नहीं है और अच्छी भी नहीं है।

यह बे-ग़ैरती की बात है

यह कितनी बे-ग़ैरती की बात है कि इन्सान एक ऐसी क़ौम का लिबास पसन्द करके उसको इख़्तियार करे, जिस क़ौम ने तुम्हें हर तरीके से गुलामी की चक्की में पीसा, तुम्हारे ऊपर ज़ुल्म व सितम तोड़े, तुम्हारे ख़िलाफ़ साज़िशें कीं, तुम्हें मौत के घाट उतारा और ज़ुल्म व सितम का कोई तरीका ऐसा

नहीं है जो उसने छोड़ा हो, अब तुम ऐसी क़ौम के तरीक़ों को इज़्ज़त और एहतिराम के साथ इख़्तियार करो, यह कितनी बे–ग़ैरती की बात है।

अंग्रेज़ों की तंग नज़री

लोग हमें यह कहते हैं कि आप जो इस क़िस्म का लिबास पहनने से मना करते हैं यह तंग नज़री की बात है, और ऐसी बात कहने वालों को तंग नज़र कहा जाता है। हालांकि जिस क़ौम का लिबास तुम इख़्तियार कर रहे हो, उसकी तंग नज़री और मुसलमान दुश्मनी का आलम यह है कि जब उसने हिन्दुस्तान पर क़ब्ज़ा किया तो हमारे मुग़ल मुसलमान बादशाहों का जो लिबास था, यानी पगड़ी और ख़ास शलवार क़मीस उसने वह लिबास अपने ख़ानसामों को पहनाया, अपने बैरों को पहनाया, अपने चौकीदारों को पहनाया और उसने उनको यह लिबास पहनने पर मज्बूर किया। ऐसा क्यों किया? सिर्फ़ मुसलमानों को ज़लील करने के लिए और यह दिखाने के लिए कि देखो, हमने तुम्हारे बादशाहों का लिबास अपने नौकरों को, अपने ख़ानसामों को और बैरों को पहनाया, इस क़ौम की तंग नज़री का तो यह आलम है और माशा अल्लाह हमारी दरिया दिली का यह आलम है कि हम उनका लिबास बड़े फ़ख़्र से और बड़े ज़ौक़ व शौक़ से पहनने के लिए तैयार हैं। अब अगर उनसे कोई कहे कि यह लिबास पहनना ग़ैरत के ख़िलाफ़ है तो उसको कहा जाता है कि तू तंग नज़र है।

ख़िरद का नाम जुनूं रख दिया जुनूं का ख़िरद
जो चाहे आपका हुस्ने करिश्मा साज़ करे

बहर हाल, इसमें शरअ़ी बुराई के अ़लावा बड़ी बे–ग़ैरती की भी बात है।

तुम अपना सब कुछ बदल डालो, लेकिन......

यह बात भी ख़ूब समझ लो कि तुम कितना ही उनका लिबास पहन लो, और कितना ही उनका तरीक़ा इख़्तियार कर लो, मगर तुम फिर भी उनकी निगाह में इज़्ज़त नहीं पा सकते, क़ुरआने करीम ने साफ़ साफ़ कह दिया है कि:

"وَلَنْ تَرْضٰى عَنْكَ الْيَهُوْدُ وَلَا النَّصَارٰى حَتّٰى تَتَّبِعَ مِلَّتَهُمْ"
(البقرة:١٢٠)

ये यहूद और नसारा तुम से कभी भी राज़ी नहीं होंगे, जब तक तुम इनकी मिल्लत को इख़्तियार नहीं कर लोगे, उनके नज़रियात, उनके ईमान, उनके दीन को इख़्तियार नहीं कर लोगे, उस वक़्त तक वे तुम से राज़ी नहीं होंगे।

इसलिये अब तुम अपना लिबास बदल लो, पोशाक बदल लो, सरापा बदल लो, जिस्म बदल लो, जो चाहो बदल लो, लेकिन वे तुम से राज़ी होने को तैयार नहीं। चुनांचे तुम ने तजुर्बा करके देख लिया, सब कुछ करके देख लिया, सब कुछ उनकी नक़्क़ाली पर फ़ना करके देख लिया, सर से लेकर पांव तक तुम ने अपने आपको बदल लिया, क्या तुम से वे लोग ख़ुश हो गए? क्या तुम से राज़ी हो गए? क्या तुम्हारे साथ

उन्हों ने हमदर्दी का बर्ताव शुरू कर दिया? आज भी उनकी दुश्मनी का वही आ़लम है, और इस लिबास की वजह से उनके दिल में तुम्हारी इ़ज़्ज़त कभी पैदा नहीं हो सकती।

इक़्बाल मरहूम की मग़रिबी ज़िन्दगी पर टिप्पणी

इक़्बाल मरहूम ने नसर के अन्दाज़ में तो बहुत गड़ बड़ बातें भी की हैं, लेकिन शेरों में कभी कभी बड़ी हिक्मत की बातें कह देते हैं। चुनांचे मग़रिबी लिबास और मग़रिबी ज़िन्दगी के तरीक़े वग़ैरह पर तब्सिरा (टिप्पणी) करते हुए उन्हों ने कहा है कि:

क़ुव्वते मग़रिब न अज़ चंग व रबाब
ने ज़-रक़्से दुख़्तराने बे हिजाब
ने ज़-सहरे साहिराने लाला ज़ोस
ने ज़-उर्यां साक़ ने अज़ क़त्ए मोश

यानी मग़रिबी मुल्कों के अन्दर जो क़ुव्वत नज़र आ रही है, वह इस चंग व रबाब की वजह से नहीं। मौसीक़ी और गानों की वजह से नहीं, और लड़कियों के बेपर्दा होने और उनके नाचने गाने की वजह से भी नहीं है, और यह तरक़्क़ी इस वजह से भी नहीं है कि उनकी औ़रतों ने सर के बाल काट कर पट्टे बना लिये, और न इस वजह से है कि उन्हों ने अपनी पिन्डली नंगी कर ली। आगे कहते हैं कि:

क़ुव्वते अफ़रंग अज़ इल्म व फ़न अस्त
अज़ हमीं आतिश चिराग़श रोशन अस्त

यानी जो कुछ कुव्वत है वह उनकी मेहनत की वजह से है, इल्म व हुनर की वजह से है, और इसी वजह से वे तरक़्क़ी कर रहे हैं, फिर आख़िर में कहा कि:

हिक्मत अज़ क़ता व बुरीद जामा नेस्त
माने-ए-इल्म व हुनर अ़मामा नेस्त

यानी हिक्मत और हुनर किसी ख़ास क़िस्म का लिबास पहनने से हासिल नहीं होती, और अ़मामा पहनने से इल्म व हुनर हासिल होने में कोई रुकावट पैदा नहीं होती। बहर हाल, असल चीज़ जो हासिल करने की थी वह तो हासिल की नहीं, और लिबास व पोशाक और तरीक़े ज़िन्दगी में उनकी नक़ल उतार कर उनके आगे भी अपने आप को ज़लील कर लिया। दुनिया से इज़्ज़त वही कराता है जिसको अपने तरीक़े ज़िन्दगी से इज़्ज़त हो। अगर दिल में अपनी इज़्ज़त नहीं, अपने तरीक़े की इज़्ज़त नहीं तो फिर वह दुनिया से क्या इज़्ज़त करायेगा। इसलिये तुम्हारा यह अन्दाज़ और यह तरीक़ा उनको कभी पसन्द नहीं आयेगा चाहे तुम उनके तरीक़ों में डूब कर देख लो, और अपने आप को पूरी तरह बदल कर देख लो।

तशब्बोह और मुशाबहत दोनों से बचो

बहर हाल फ़त्वे की बात तो वह है जो मैंने पहले अ़र्ज़ की कि "तशब्बोह" तो ना जायज़, हराम और गुनाह है, और "तशब्बोह" का मतलब यह है कि इरादा करके उन जैसा बनने की कोशिश करना, और "मुशाबहत" के मायने यह हैं कि उन

जैसा बनने का इरादा तो नहीं था लेकिन कुछ मुशाबहत पैदा हो गई। यह गुनाह और हराम तो नहीं है, लेकिन कराहत से ख़ाली नहीं, और ग़ैरत के तो बिल्कुल ख़िलाफ़ है। इसलिये इन दोनों से बचने की ज़रूरत है। यह लिबास का तीसरा उसूल था।

लिबास के बारे में चौथा उसूल

लिबास के बारे में चौथा उसूल यह है कि ऐसा लिबास पहनना हराम है जिसको पहन कर दिल में तकब्बुर और बड़ाई पैदा हो जाए। चाहे वह लिबास टाट ही का क्यों न हो। जैसे अगर कोई एक शख़्स टाट का लिबास पहने और मक़सद उसका यह हो कि यह पहन कर लोगों की नज़रों में बड़ा बुज़ुर्ग और सूफ़ी नज़र आऊं, और मुत्तक़ी परहेज़गार बन जाऊं, और फिर उसकी वजह से दूसरों पर अपनी बड़ाई का ख़्याल दिल में आ जाए, और दूसरों की तहक़ीर (ज़लील समझना) पैदा हो जाए तो ऐसी सूरत में वह टाट का लिबास भी तकब्बुर का ज़रिया और सबब है, इसलिये हराम है। हज़रत सुफ़ियान सौरी रहमतुल्लाहि अलैहि फ़रमाते हैं कि तकब्बुर कपड़े पहनने से नहीं होता बल्कि दूसरों की हक़ारत (ज़लील समझना) दिल में लाने से होता है, इसलिये कभी कभी एक शख़्स यह समझता है कि मैं बड़ा तवाज़ो वाला लिबास पहन रहा हूं और हक़ीक़त में उसके अन्दर तकब्बुर भरा होता है।

टख़्ने छुपाना जायज़ नहीं

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन उमर रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि जो शख़्स अपने कपड़े को तकब्बुर के साथ नीचे घसीटे तो अल्लाह तआ़ला क़ियामत के दिन उसको रहमत की निगाह से देखेंगे भी नहीं। (बुख़ारी शरीफ़)

दूसरी हदीस में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि मर्द के कपड़े के नीचे का जितना टख़्नों से नीचे होगा वह हिस्सा जहन्नम में जायेगा, इस से मालूम हुआ कि मर्दों के लिए टख़्नों से नीचे पाजामा, शलवार, पतलून, लुंगी वग़ैरह पहनना जायज़ नहीं, और उस पर हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने दो दो वईदें बयान फ़रमायीं, एक यह कि टख़्नों से नीचे जितना हिस्सा होगा वह जहन्नम में जायेगा, और दूसरे यह कि क़ियामत के दिन अल्लाह तआ़ला ऐसे शख़्स की तरफ़ रहमत की निगाह से देखेगा भी नहीं। अब देखिए कि टख़्नों से ऊपर पाजामा वग़ैरह पहनना एक मामूली बात है, अगर एक इंच ऊपर शलवार पहन ली तो इस से क्या आफ़त और मुसीबत आ जायेगी? कौन सा आसमान टूट पड़ेगा? लेकिन अल्लाह तआ़ला की नाराज़गी से बच जाओगे और अल्लाह तआ़ला की नज़रे रहमत हासिल होगी। और यह ऐसा गुनाहे बे-लज़्ज़त है कि जिस में पूरी की पूरी क़ौम मुब्तला है, किसी को फ़िक्र ही नहीं।

टख़्ने छुपाना तकब्बुर की निशानी

हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के नबी की हैसियत से ज़ाहिर होने का ज़माना, जाहिलिय्यत का ज़माना था, उसमें टख़्ने ढकने और पाजामे और लुंगी वग़ैरह को नीचे तक पहनने का बड़ा फ़ैशन और रिवाज था। बल्कि अगर पाजामा और लुंगी वग़ैरह ज़मीन पर भी घिसटता जाए तो इसको और अच्छा और क़ाबिले फ़ख़्र समझा जाता था, मदारिस के दर्से निज़ामी में एक किताब "हिमासा" पढ़ाई जाती है जो जाहिलिय्यत के शायरों के शेरों पर मुश्तमिल है, उस किताब में एक शायर अपने हालात पर फ़ख़्र करते हुए कहता है कि:

"اذا ما اصطبحت اربعا خط میزری"

यानी जब मैं सुबह के वक़्त शराब के चार जाम चढ़ा कर निकलता हूं तो मेरा पाजामा या लुंगी वग़ैरह ज़मीन पर लकीरें बनाता हुआ जाता है। अब वह अपने इस तर्ज़े अ़मल को अपना क़ाबिले फ़ख़्र कारनामा बता रहा है। लेकिन जब हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम तशरीफ़ लाए तो आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने जिस तरह जाहिलिय्यत के और तरीक़ों को ख़त्म फ़रमाया, इसी तरह इस तरीक़े को भी ख़त्म फ़रमाया, और आप सल्लल्लाहु अ़लैहिं व सल्लम ने फ़रमाया कि इस अ़मल के ज़रिये दिल में तकब्बुर और घमण्ड पैदा होता है। इसलिये पाजामे और लुंगी वग़ैरह को टख़्नों से ऊपर होना

चाहिए।

इस से इस प्रोपैगन्डे का भी जवाब हो गया जो आज कल बहुत फैलाया जा रहा है, और बहुत से लोग यह कहने लगे हैं कि हक़ीक़त में हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने वे तरीक़े इख़्तियार कर लिए जो आपके ज़माने में राइज थे, और जैसा लिबास कुरैश में राइज था, जैसी कांट छांट और शक्ल व सूरत राइज थी उसी को इख़्तियार कर लिया। अब अगर आज हम अपने दौर के राइज शुदा तरीक़े इख़्तियार कर लें तो इसमें क्या हर्ज है?

ख़ूब समझ लीजिए कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी भी अपने ज़माने में राइज तरीक़ों को इख़्तियार नहीं फ़रमाया, बल्कि उनमें तब्दीली पैदा की, और उनको ना जायज़ क़रार दिया। आज लोग न सिर्फ़ यह कि ग़लतकारी में मुब्तला हैं, बल्कि कभी कभी बहस करने को तैयार हो जाते हैं कि अगर पाजामा और लुंगी वग़ैरह टख़्नों से ज़रा नीचे हो गया तो इसमें क्या हर्ज है? अरे हर्ज यह है कि यह हिस्सा जहन्नम में जायेगा। और यह अ़मल अल्लाह तआ़ला के ग़ज़ब को वाजिब करने वाला है।

अंग्रेज़ के कहने पर घुटने भी खोल दिए

हमारे एक बुज़ुर्ग थे हज़रत मौलाना एहतिशामुल्हक़ साहिब थानवी रह्मतुल्लाहि अ़लैहि, वह एक तक़रीर में फ़रमाने लगे कि अब हमारा यह हाल हो गया है कि जब हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि टख़्ने खोल दो, और टख़्ने ढकना जायज़ नहीं तो उस वक़्त हम लोग टख़्ने खोलने को तैयार नहीं थे, और जब अंग्रेज़ ने कहा कि घुटना खोल दो और नेकर पहन लो, तो अब घुटना खोलने को तैयार हो गए। तो अंग्रेज़ के हुक्म पर घुटना भी खोल दिया और नेकर भी पहन ली, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के हुक्म पर टख़्ने खोलने पर तैयार नहीं। यह कितनी बे–ग़ैरती की बात है, अरे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मुहब्बत के भी कुछ तक़ाज़े हैं, इसलिये जब आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस अ़मल को ना पसन्द फ़रमाया तो एक मुसलमान को किस तरह यह गवारा हो सकता है कि वह उसके ख़िलाफ़ करे।

हज़रत उसमान ग़नी रज़ि० का एक वाक़िआ

हज़रत उसमान ग़नी रज़ियल्लाहु अ़न्हु का वाक़िआ मैंने आपको पहले भी सुनाया था कि सुलह हुदैबिया के मौक़े पर जब आप मक्के के कुफ़्फ़ार से बात चीत के लिए तशरीफ़ लेजा रहे थे तो उनके चचाज़ाद भाई ने जो उनके साथ थे कहा कि यह आपका पाजामा टख़्नों से ऊंचा है, और मक्के कि जिन रईसों और सरदारों से आप बात चीत के लिए जा रहे हैं वे लोग ऐसे आदमी को ज़लील और कम दर्जा समझते हैं जिसका पाजामा टख़्नों से ऊंचा हो, इसलिये आप थोड़ी देर के लिए अपना टख़्ना ढक लें, और पाजामे को नीचे कर लें, ताकि वे

लोग आपको कम दर्जा न समझें। हज़रत उसमान ग़नी रज़ियल्लाहु अन्हु ने जवाब में फ़रमायाः

"لا هكذا ازارة صاحبنا رسول الله صلى الله عليه وسلم"

यानी नहीं यह काम मैं नहीं कर सकता, इसलिये कि मेरे आक़ा सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का इज़ार (पाजामा या लुंगी वग़ैरह) ऐसा ही होता है। अब चाहे वे लोग हक़ीर समझें, या ज़लील समझें, अच्छा समझें, या बुरा समझें उस से मुझे कोई सरोकार नहीं, बस मेरे हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का तरीक़ा यह है और मैं तो इसी को इख़्तियार करूंगा। फिर उन्हों ने ही दुनिया से अपनी इज़्ज़त कराई, आज हम इस मुसीबत में मुब्तला हैं कि डर रहे हैं, झेंप रहे हैं, शर्मा रहे हैं। कि अगर पाजामा और लुंगी वग़ैरह टख़्नों से ऊंचा कर लिया तो क़ायदे के ख़िलाफ़ हो जायेगा, एटीकेट के ख़िलाफ़ हो जायेगा, फ़ैशन के ख़िलाफ़ हो जायेगा। ख़ुदा के लिए ये ख़्यालात दिल से निकाल दो, और हुज़ूर सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम की इत्तिबा और पैरवी का जज़्बा दिल में पैदा करो।

अगर दिल में तकब्बुर न हो तो क्या इसकी इजाज़त होगी?

बाज़ लोग यह प्रोपैगन्डा करते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने तकब्बुर की वजह से टख़्ने से नीचे पाजामा सर लुंगी पहनने को मना फ़रमाया था। इसलिये

अगर तकब्बुर न हो तो फिर टख़्नों से नीचे पहनने में कोई हर्ज नहीं, और दलील में यह हदीस पेश करते हैं कि एक बार हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु ने हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से फ़रमाया कि या रसूलल्लाह! आपने तो फ़रमाया कि इज़ार (पाजामे या लुंगी) को टख़्ने से नीचे न करो, लेकिन मेरा इज़ार (पाजामा या लुंगी) बार बार टख़्ने से नीचे ढलक जाता है, मेरे लिए ऊपर रखना मुश्किल होता है। मैं क्या करूं? तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि तुम्हारा इज़ार (पाजामा या लुंगी) जो नीचे ढलक जाता है, यह तकब्बुर की वजह से नहीं है बल्कि तुम्हारे उज़्र और मजबूरी की वजह से ढलक जाता है, इसलिये तुम उनमें दाख़िल नहीं। (अबू दाऊद शरीफ़)

अब लोग दलील में इस वाक़िए को पेश करके यह कहते हैं कि हम भी तकब्बुर की वजह से नहीं करते इसलिये हमारे लिए जायज़ होना चाहिए। बात असल में यह है कि यह फ़ैसला कौन करे कि तुम तकब्बुर की वजह से करते हो, या तकब्बुर की वजह से नहीं करते? अरे भाई यह तो देखो कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम से ज़्यादा तकब्बुर से पाक कौन हो सकता है? लेकिन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने कभी ज़िन्दगी भर टख़्नों से नीचे इज़ार नहीं पहना, इस से मालूम हुआ कि हज़रत सिद्दीक़े अक्बर रज़ियल्लाहु अन्हु को जो इजाज़त दी गई थी वह एक मजबूरी

की वजह से दी गई थी। वह मजबूरी यह थी कि उनके जिस्म की बनावट ऐसी थी कि बार बार उनका इज़ार खुद बखुद नीचे ढलक जाता था, लेकिन तुम्हारे साथ क्या मजबूरी है? और आज तक आपने कोई ऐसा घमण्डी देखा है जो यह कहे कि मैं घमण्ड करता हूं, मैं घमण्डी हूं। इसलिये कि किसी तकब्बुर करने वाले को कभी ख़ुद से अपने घमण्डी होने का ख़्याल नहीं आता। इसलिये शरीअ़त ने निशानियों की बुनियाद पर अहकाम जारी किए हैं। यह नहीं कहा कि तकब्बुर हो तो इज़ार (पाजामे या लुंगी) को ऊंचा रखो वर्ना नीचे कर लिया करो। बल्कि शरीअ़त ने बता दिया कि जब इज़ार (पाजामे या लुंगी) को नीचे लटका रहे हो, इसके बावजूद कि हुज़ूर सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने इस से मना फ़रमा दिया है, इसका साफ़ मतलब यह है कि तुम्हारे अन्दर तकब्बुर है, इसलिये हर हालत में इज़ार (पाजामा या लुंगी) नीचे लटकाना ना जायज़ है।

मुहक़्क़िक़ उलमा का सही क़ौल

अगरचे बाज़ फुक़हा ने यह लिख दिया है कि अगर तकब्बुर की वजह से नीचे करे तो मक्रूहे तहरीमी है और तकब्बुर के बग़ैर करे तो मक्रूहे तन्ज़ीही है। लेकिन उलमा-ए-मुहक़्क़िक़ीन का सही क़ौल यह है और जिस पर उनका अ़मल भी रहा है कि हर हालत में नीचे करना मक्रूहे तहरीमी है, इसलिये कि तकब्बुर का पता लगाना आसान नहीं

है, कि तकब्बुर कहां है, और कहां नहीं, इसलिये इस से बचने का रास्ता यह है कि आदमी टख़्ने से ऊंचा इज़ार पहने, और तकब्बुर की जड़ ही ख़त्म कर दी जाए। अल्लाह तआ़ला अपने फ़ज़्ल और रहमत से इन उसूलों पर अ़मल की तौफ़ीक़ अ़ता फ़रमाए, आमीन।

बहर हाल, लिबास के ये चार उसूल हैं, पहला उसूल यह है कि वह सातिर यानी छुपाने वाला होना चाहिए, दूसरा उसूल यह है कि शरीअ़त की हदों में रहते हुए उसके ज़रिये ज़ीनत भी हासिल करनी चाहिए, तीसरा उसूल यह है कि उसके ज़रिये नुमाइश और दिखावा मक़्सूद न हो, चौथा उसूल यह है कि उसके पहनने से दिल में तकब्बुर पैदा न हो। अब आगे लिबास से मुताल्लिक़ जो हदीसें हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से मन्क़ूल हैं, वे पढ़ लेते हैं।

सफ़ेद रंग के कपड़े पसन्दीदा हैं

"عن ابن عباس رضى الله تعالىٰ عنهما عن النبى صلى الله عليه وسلم، قال: البسوا من ثيابكم البياض، فانها من خير ثيابكم، وكفنوا فيها موتاكم" (ابوداؤد شريف)

हज़रत अ़ब्दुल्लाह बिन अ़ब्बास रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि नबी–ए–करीम सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने फ़रमाया कि सफ़ेद रंग के कपड़े पहनो, इसलिये कि मर्दों के लिए सब से अच्छे कपड़े सफ़ेद रंग के हैं, और अपने मुर्दों को भी सफ़ेद कफ़न दो।

इस हदीस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मर्दों के लिए सफ़ेद रंग के कपड़ों को पसन्द फ़रमाया, अगरचे दूसरे रंग के कपड़े पहनना ना जायज़ नहीं, हराम नहीं, चुनांचे ख़ुद हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से साबित है कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने कभी कभी दूसरे रंग के कपड़े पहने हैं, लेकिन ज़्यादा तर आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम सफ़ेद कपड़े पहनते थे। इसलिये अगर मर्द इस नियत से सफ़ेद कपड़े पहने कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का आ़म मामूल सफ़ेद कपड़े पहनने का था और आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को सफ़ेद कपड़े पसन्द थे तो इस नियत की वजह से इन्शा अल्लाह इत्तिबा–ए–सुन्नत का सवाब हासिल हो जायेगा। हां, कभी दूसरे रंग का कपड़ा पहन लिया तो वह भी कुछ शर्तों के साथ मर्दों के लिए जायज़ है, कोई ना जायज़ नहीं, चुनांचे अगली हदीस है:

हुज़ूर सल्ल० का लाल धारीदार कपड़े पहनना

"عن براء بن عازب رضى الله عنه قال: كان رسول الله صلى الله عليه و سلم مربوعا، وقد رايته فى حلة حمراء ما رايت شيئا قط احسن منه" (بخارى شريف)

हज़रत बरा बिन आ़ज़िब रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि मैंने एक बार हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को लाल जोड़े में देखा और मैंने आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम

से ज़्यादा ख़ूबसूरत वजूद इस कायनात में नहीं देखा।

बल्कि एक सहाबी शायद हज़रत जाबिर बिन सुमरा रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि एक बार चौदहवीं का चांद चमक रहा था, चांदनी रात थी, और हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम लाल जोड़ा पहने तशरीफ़ फ़रमा थे, तो उस वक़्त हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम इतने हसीन लग रहे थे कि मैं बार बार कभी चौदहवीं के चांद को देखता और कभी सरकारे दो आलम सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम को देखता, आख़िर मैंने यह फ़ैसला किया कि यक़ीनन हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का हुस्न व जमाल चौदहवीं के चांद से कहीं ज़्यादा था। तो इन हदीसों से हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम का लाल जोड़ा पहनना साबित है। (तिर्मिज़ी शरीफ़)

ख़ालिस लाल जोड़ा मर्द के लिये जायज़ नहीं

लेकिन यह बात समझ लीजिए कि लाल जोड़े से मुराद यह नहीं है कि पूरा लाल था, बल्कि उलमा–ए–किराम ने दूसरी रिवायतों की रोशनी में लिखा है कि उस ज़माने में चादरें आया करती थीं, उन चादरों पर लाल रंग की धारियां हुआ करती थीं। पूरी लाल नहीं होती थीं और वह बहुत अच्छा कपड़ा समझा जाता था, तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने उसी लाल धारियों वाले कपड़े का जोड़ा पहना हुआ था। और यह जोड़ा आप सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने

इसलिये पहना कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की उम्मत को पता चल जाए कि इस क़िस्म के कपड़े पहनना जायज़ है। कोई गुनाह नहीं। लेकिन बिल्कुल ख़ालिस लाल कपड़ा पहनना मर्द के लिए जायज़ नहीं। इसी तरह ऐसे कपड़े जो औरतों के साथ मख़्सूस समझे जाते हैं, ऐसे कपड़े पहनना भी मर्दों के लिए जायज़ नहीं, इसलिये कि इसमें औरतों के साथ तशब्बोह हो जायेगा और यह तशब्बोह भी ना जायज़ है।

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का हरे कपड़े पहनना

"عن رفاعة التيمى رضى الله عنه، قال: رايت رسول الله صلى الله عليه وسلم وعليه ثوبان اخضران" (ابوداؤدشريف)

हज़रत रिफ़ाआ़ तैमी रज़ियल्लाहु अ़न्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम को देखा कि आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम पर दो हरे रंग के कपड़े थे।

इस से मालूम हुआ कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने हरे रंग के कपड़े भी पहने हैं। तो कभी कभी आपने दूसरे रंगों के कपड़े पहन कर यह बता दिया कि ऐसा करना भी जायज़ है, कोई गुनाह नहीं, लेकिन आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम का पसन्दीदा कपड़ा सफ़ेद ही था।

आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की पगड़ी के रंग

"وعن جابر رضى الله عنه، ان رسول الله صلى الله عليه وسلم دخل عام الفتح مكة وعليه عمامة سوداء" (ابوداؤد شريف)

हज़रत जाबिर रज़ियल्लाहु अन्हु फ़रमाते हैं कि हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम फ़त्हे मक्का के दिन जब मक्का मुकर्रमा में दाख़िल हुए तो उस वक़्त आप सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम के सर पर काले रंग की पगड़ी थी। हुज़ूरे पाक सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम से सफ़ेद पगड़ी पहनना भी साबित है, और काली पगड़ी पहनना भी साबित है, और बाज़ रिवायतों में हरी पगड़ी भी पहनना साबित है, तो हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम ने मुख़्तलिफ़ रंगों की पगड़ियां पहनी हैं।

आस्तीन कहां तक होनी चाहियें

"وعن اسماء بنت يزيد رضى الله عنها قالت: كان كم قميص رسول الله صلى الله عليه وسلم الى الرسغ" (ابوداؤد شريف)

यानी हुज़ूरे अक़्दस सल्लल्लाहु अ़लैहि व सल्लम की क़मीस की आस्तीन गट्टों तक होती थी, इसलिये मर्दों के लिए तो सुन्नत यह है कि उनकी आस्तीन गट्टों तक हो, अगर इस से कम होगी तो सुन्नत अदा नहीं होगी, अगरचे जायज़ है, लेकिन औ़रतों के लिए गट्टों से ऊपर का हिस्सा खुला रखना किसी तरह भी जायज़ नहीं, हराम है। क्योंकि उनके लिए पंजे से नीचे पूरी कलाई सत्र में दाख़िल है। उसका खोलना किसी भी हाल में जायज़ नहीं। आज कल यह फ़ैशन भी औ़रतों में चल पड़ा है कि क़मीस की आस्तीन आधी होती है और बहुत सी बार पूरे बाज़ू खुले होते हैं। हालांकि एक बार हुज़ूरे अक़्दस

सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम ने अपनी साली हज़रत अस्मा रज़ियल्लाहु अन्हा को बुलाकर फ़रमाया कि जब लड़की बालिग़ हो जाए तो उसके जिस्म का कोई हिस्सा खुला न रहना चाहिए, सिवाए पहुंचों तक हाथों के और चेहरे के। इसलिये अगर आस्तीन छोटी हैं तो इसका मतलब यह है कि सत्र का हिस्सा खुला हुआ है और इस तरह औरतें सत्र खोलने के गुनाह में मुब्तला हो जाती हैं। इसलिये उनको इसका भी एहतिमाम करना चाहिए और मर्दों को भी चाहिए कि वे औरतों को इन बातों पर मुतनब्बह करते रहें, यह जो हमने कहना सुनना छोड़ दिया है इसके नतीजे में हम कहां से कहां पहुंच गये हैं। अल्लाह तआला हम सब को इन बातों पर अमल करने की तौफ़ीक़ अता फ़रमाए, आमीन।

واٰخردعوانا ان الحمد للّٰہ رب العالمین